कल्याण

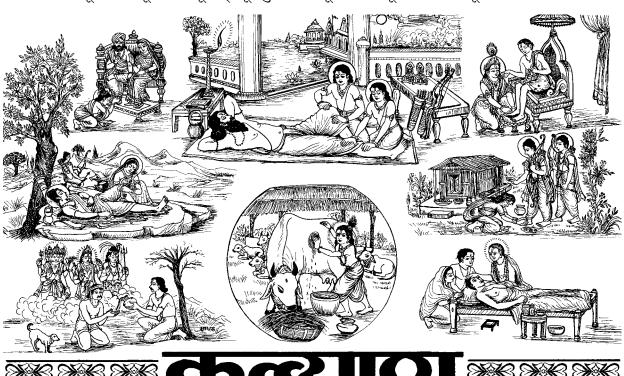


मं



भक्त प्रह्वादद्वारा भगवान् नृसिंहकी स्तुति

🕉 पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदच्यते। पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते॥



शान्ता महान्तो निवसन्ति सन्तो वसन्तवल्लोकहितं चरन्तः। तीर्णाः स्वयं भीमभवार्णवं जनानहेतुनान्यानपि तारयन्तः॥

वर्ष ८९ गोरखपुर, सौर ज्येष्ठ, वि० सं० २०७२, श्रीकृष्ण-सं० ५२४१, मई २०१५ ई० पूर्ण संख्या १०६२

भक्त प्रह्लादद्वारा भगवान् नृसिंहकी स्तुति

समीरा धरनी तीरा इंद्रिय अनल * बिगुणहु बचनेते गुण जेते मन सबमें * X तुम भगवाना॥ जेते विनशहिं तेते जनमहि पुनि नर मुनि सुर जग माँहीं। * * शेष तुमको विधि आदि सुरेशा महेशा नाहीं॥ जानत * X गुनि बैठि एकंता तजहिं संसारै। संता यह मन तुरत * * रीती तुव पद प्रीती तुव पुन भक्तिहि करि आश् सिधारै॥ * अति सुखदाई केहु के * मन नहिं आवै। यह उपाई जीवा लहि दुख सीवा मंगल पावै॥ * ताते कतहु दुख-द्वंद्वन अस्तुति प्रभु तुव पदबंदन सब तुव सुखदाई। * * तिहारो अघहारो शुचिप्रद अति शुचिताई॥ पद * * सुहावनि प्रीति बढ़ावनि कलि-कलमष की हरनी। तव कथा * * अतिहि अपारा भव पारावारा ताकी तारन तरनी ॥ * X ये षट्विधि सेवन बिना, कैसेहु भक्ति न होइ। * * ताते कीजे मोहि निज, दास दुरित सब धोइ॥ —महाराज श्रीरघुराजसिंहजी

हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे। हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे॥ (संस्करण २,१५,०००) कल्याण, सौर ज्येष्ठ, वि० सं० २०७२, श्रीकृष्ण-सं० ५२४१, मई २०१५ ई० विषय-सूची पुष्ठ-संख्या पृष्ठ-संख्या विषय विषय १- भक्त प्रह्लादद्वारा भगवान् नृसिंहकी स्तुति...... ३ १३- रामकथामें मुसलिम साहित्यकारोंका योगदान (श्रीबद्रीनारायणजी तिवारी) २५ २– कल्याण...... ५ १४- पढना और है, गुनना और! (श्रीकृष्णदत्तजी भट्ट) २९ ३- सेवा, जप, ध्यान, प्रेम तथा व्याकुलता १५- मनको वशमें कैसे करें ? (श्रीराधेश्यामजी चाँडक) ३२ (ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका) ६ १६- जीवनकी उपलब्धि [कहानी] (श्रीरामेश्वरजी टांटिया) ४- 'शरण तिहारी आयो' [कविता] (श्रीगोपीनाथजी पारीक 'गोपेश') ९ [प्रेषक—श्रीनन्दलालजी टांटिया] ३३ ५- 'लौ' (पं० श्रीभुवनेश्वरनाथजी मिश्र 'माधव', एम० ए०) १० १७- मातृशक्ति गौ (श्रीविष्णुकान्तजी सारडा)...... ३५ ६- अशुद्ध कमाई तथा शुद्ध कमाईके धनका प्रभाव १८- आचार्यश्री सत्य कहते थे [लघुकथा] (श्रीसुभाषजी खन्ना).. ३६ (श्रीशिवकुमारजी गोयल) १२ १९- संत उदबोधन ७- भजन क्यों नहीं होता? (नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी (ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीशरणानन्दजी महाराज)....... ३७ श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार) १३ २०- भावनाओंपर नियन्त्रण (श्रीइन्द्रदेवजी सक्सेना)...... ३८ ८- श्रद्धा संस्कृतिका कवच है (श्रीरामनाथ 'सुमन') १६ २१- व्रतोत्सव-पर्व [आषाढमासके व्रत-पर्व] ३९ २२- साधनोपयोगी पत्र..... ४० ९- आवरणचित्र-परिचय १७ २३- कृपानुभूति ४२ १०- साधकोंके प्रति— २४- पढ़ो, समझो और करो ४३ (ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीरामसुखदासजी महाराज) १८ ११- अभिशाप नहीं है प्रतिकृलता (श्रीताराचन्दजी आहुजा) .. २० २५- मनन करने योग्य.....४६ २६- 'कल्याण' का आगामी ९०वें वर्ष (सन् २०१६ ई०)-का १२- कोखकी कीमत [बोधकथा] (श्रीशंकरलालजी माहेश्वरी) २२ विशेषाङ्क 'गंगा-अङ्क'.....४७ चित्र-सूची २- भक्त प्रह्लादद्वारा भगवान् नृसिंहकी स्तुति...... पु.ज.)...... मुख-पृष्ठ जय पावक रवि चन्द्र जयति जय। सत्-चित्-आनँद भूमा जय जय॥ एकवर्षीय शुल्क पंचवर्षीय शुल्क जय जय विश्वरूप हरि जय। जय हर अखिलात्मन् जय जय॥ जगत्पते । गौरीपति विराट् जय रमापते ॥ अजिल्द ₹२०० जय अजिल्द ₹१००० विदेशमें Air Mail) वार्षिक US\$ 45 (₹2700) Us Cheque Collection सजिल्द ₹२२० सजिल्द ₹११०० पंचवर्षीय US\$ 225 (₹13500) सजिल्द शुल्क Charges 6\$ Extra संस्थापक - ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका आदिसम्पादक — नित्यलीलालीन भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार सम्पादक —राधेश्याम खेमका, सहसम्पादक—डॉ० प्रेमप्रकाश लक्कड केशोराम अग्रवालद्वारा गोबिन्दभवन-कार्यालय के लिये गीताप्रेस, गोरखपुर से मुद्रित तथा प्रकाशित website: www.gitapress.org e-mail: kalyan@gitapress.org © (0551) 2334721 सदस्यता-शुल्क —व्यवस्थापक—'कल्याण-कार्यालय', पो० गीताप्रेस—२७३००५, गोरखपुर को भेजें। Online सदस्यता-शुल्क -भुगतानहेतु-www.gitapress.org पर Online Magazine Subscription option को click करें। अब 'कल्याण' के मासिक अङ्क kalyan-gitapress.org पर नि:शुल्क पढ़ें।

संख्या ५] कल्याण कल्याण याद रखो-मन्दिरमें प्रभुके श्रीविग्रहके सामने ग्रहण करते हैं तथा इष्ट-मित्रोंको भी प्रसाद देते हैं। हम विविध सामग्रियोंसे उनकी पूजा करते हैं, उन्हें धूप, हमें जब शीतका अनुभव होता है, तब हम अपने दीप, नैवेद्य, ताम्बूल अर्पण करते हैं, उनकी आरती अंगोंको आवश्यक वस्त्रोंसे ढँकते हैं। जब हमारे उतारते हैं, उनके लिये सुन्दर शय्या बिछाकर उन्हें शरीरमें रोग होते हैं, तब उनको दूर करनेके लिये हम शयन कराते हैं तथा फिर बड़े भावसे बीजना (पंखा) ओषिधयोंका भी सेवन करते हैं; किंतु ऐसा करते समय डुलाकर उनकी सेवा करते हैं। ऐसा करना बडे सभी तो नहीं, पर हममेंसे अधिकतर इस बातको भूल जाते हैं कि अभी-अभी हम जिन प्रभुकी पूजा मन्दिरमें सौभाग्यकी बात है; अवश्य-अवश्य ऐसा करना चाहिये। पर यदि इस पूजाके साथ ही हम विश्वरूप भगवान्की कर आये हैं, वे ही प्रभु पुन: हमारी पूजा ग्रहण करनेके पूजाको भी अपनी दिनचर्यामें सम्मिलित कर लेते तो लिये विविध रूप धारण किये बाहर खड़े हैं। वे ही हमारा जीवन फिर पूजामय बन जाता, हमारी पूजा स्वच्छ शुद्ध वस्त्र धारण किये, सिरपर तिलक लगाये, सर्वांगीण पूजा हो जाती। निर्मल पवित्र धातु-पात्र हाथमें लिये हुए, संत-याद रखो-यदि हृदयमें प्रभुकी ज्योति जग मण्डलीके रूपमें प्रसाद पानेकी शान्तिसे बाट देख रहे गयी है तथा उस ज्योतिके आलोकमें मन्दिरके देवता हैं तथा वे ही अपने अंगोंमें चिथडा लपेटे, धूलमें सने, श्रीविग्रहके रूपमें विराजित प्रभृ हमारी दुष्टिके सामने टीनका टूटा डिब्बा हाथमें लिये, कंगाल बनकर कुछ सर्वथा चिन्मय बन गये हैं, एक क्षणके लिये भी हमें भी देनेके लिये करुण पुकार मचा रहे हैं। याद रखो-यदि हम प्रभुको इन सभी रूपोंमें यह अनुभृति नहीं होती कि ये धात्-पाषाण आदिसे पहचान पाते तो जो सुख हमें स्वयं प्रसाद पानेमें, जो बनी हुई मूर्ति हैं, तब तो कुछ कहना बनता ही नहीं; क्योंकि फिर तो हमारेद्वारा विश्वरूप प्रभुकी उपेक्षा आदर-प्रेम-भाव अपने इष्ट-मित्रोंको प्रसाद देनेमें होता सम्भव ही नहीं। हमारी दुष्टिमें विश्वकी सत्ता ही है, उससे बहुत अधिक सुख एवं प्रेमकी अनुभृति नहीं रहेगी, एकमात्र प्रभु-ही-प्रभु रहेंगे और यदि भिखारीके टीनवाले पात्रमें भोजन परसते समय होती। कहीं विश्वकी सत्ता रहेगी भी तो विश्वके अण्-जो रस हमें स्वयं ऊनी कपडे ओढनेपर ठण्ड मिटनेसे प्राप्त होता है, उससे बहुत अधिक बढ़कर रस हमें अणुमें हमें अपने इष्टदेव ही भरे दीखेंगे। जितने आदरसे, जिस प्रेमसे हम मन्दिरमें भेंट चढ़ायेंगे, उतने उसे दीन-हीन, सर्दीसे ठिठुरते हुएको कपड़ा देनेमें ही आदरसे, उसी प्रेमसे विश्वरूप प्रभुको भी हम प्राप्त होता। जो तत्परता अपने रोगको दूर करनेके लिये हममें होती है, उससे बहुत अधिक मात्रामें यथायोग्य, यथासम्भव उपहार समर्पित करेंगे; किंतु जबतक यह ज्योति नहीं जगी है, तबतक सावधान लगन उस रुग्ण अनाथ व्यक्तिकी समुचित व्यवस्था होकर हमें अपनी पूजाको विशुद्ध एवं परिपूर्ण बनानेकी एवं सेवा करनेमें होती। पर हममें तो इनसे विपरीत चेष्टा करनी पडेगी। भाव होते हैं। इसीलिये हमारी पूजा भी अधूरी ही हम देखते हैं कि पूजा समाप्त करनेके बाद जब रह जाती है। हमें भूखकी अनुभूति होती है, तब हम स्वयं प्रसाद 'शिव'

सेवा, जप, ध्यान, प्रेम तथा व्याकुलता (ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका)

[गताङ्क ४ पृ०-सं० ९ से आगे]

भगवान्का ध्यान कैसे किया जाय, इसके लिये करनेसे शरीरमें रोमांच हो जाता है। उनका दर्शन नेत्रोंके

ध्यानकी प्रक्रिया है। मान लें-भगवान् श्रीरामका भक्त लिये बहुत ही प्रिय है। नासिका बहुत ही सुन्दर, गाल

है और वह भगवान् रामका ध्यान कर रहा है। विधि बहुत ही चमकीले हैं एवं उनमें गुलाबी रंगकी झलक

बतलायी जाती है। भगवान् सामने खड़े हैं। भक्तने पहले है। कानोंमें रत्नजटित स्वर्णके मकराकृत कुण्डल हैं।

भगवानुके चरणोंका ध्यान किया, ध्यान करके मुग्ध हो कान बड़े सुन्दर हैं, दोनों नेत्र खुले हुए हैं, मानो गुलाबके

गया कि भगवान्के चरण बहुत ही सुन्दर और बहुत ही दो पुष्प खिले हुए हों। भृकुटी बहुत ही सुन्दर है और

कोमल हैं, उसमें भी अंगुलियोंकी शोभा और भी अधिक

है, नाखूनोंकी ज्योति अलग ही दीख रही है। इस प्रकार

भगवान् रामके चरण कोमल, सुन्दर, चमकीले और

आकर्षित करनेवाले हैं। ऐसे ही उनके दोनों पिण्डली,

घुटने और जंघा हैं। वे पीताम्बर पहने हुए हैं। पीताम्बर

एकदम चमक रहा है। कमर पतली है, नाभि कमलके

समान है, उदरके ऊपर तीन रेखाएँ हैं। भगवान्के गलेमें पुष्पोंकी माला सुशोभित हो रही है। मोतियों और

रत्नोंकी माला भी पहने हुए हैं। भगवान्की दो भुजाएँ

हैं। दायीं भुजामें बाण धारण किये हैं और बायीं भुजामें धनुष है, जिसकी डोरी कन्धेके ऊपर टँगी हुई है। पीछेमें

बाणों-भरा तरकश है, जिसे तूणीर कहते हैं। भगवान्की

छाती चौड़ी है। भुजा घुटने-पर्यन्त लम्बी है, भुजा

ऊपरसे मोटी और नीचेसे पतली बहुत ही सुन्दर है, जैसे

कोई सोलह वर्षका राजकुमार हो-ऐसी भगवान्की

आयु है। मानो भगवान् जनकपुरके बगीचेमें राजकुमारके

वेषमें घूम रहे हैं। हाथोंमें अंगूठी और कंगन पहने हुए हैं, गला बहुत ही सुन्दर है। ठोड़ी चमकीली है, ओठ

भी लाल मणिकी तरह चमक रहे हैं। दाँतोंकी पंक्तियाँ

सफेद मोतीकी पंक्तिकी तरह चमक रही हैं, हँस रहे हैं

मानो मुख गुलाबके पुष्पकी तरह खिला हुआ है। उनकी वाणी बहुत ही सुन्दर, गम्भीर, कोमल, अर्थयुक्त, मनको

मोहित करनेवाली, कानोंको अमृतके समान प्यारी है।

नहीं हो सकता, भगवान्का ऐसा सुन्दर स्वरूप हमको आकर्षित कर रहा है, मानो भगवान् हमारे ऊपर जाद्

कर रहे हैं, भगवान्का दर्शन, स्पर्श, भाषण, वार्तालाप,

ललाट चमक रहा है। क्षमा, दया, शान्ति, समता,

सन्तोष, सरलता-ज्ञान-वैराग्य आदि अनन्त गुण भगवान्के

नेत्रोंद्वारा बाहरमें विकसित हो रहे हैं और मुखारविन्द

एकदम खिला हुआ है, सिरके ऊपर केश एकदम चमक

रहे हैं। स्वर्णका रत्नजटित मुकुट धारण कर रखे हैं। भगवान्का ऐसा अलौकिक स्वरूप हम देख रहे हैं। ऐसे

देखते हुए उनमें जो गुण हैं, वे प्रत्यक्ष प्रतीत हो रहे हैं।

भगवान् आकाशमें स्थित होकर अपने नेत्रोंद्वारा हमलोगोंके

ऊपर अपने गुणोंकी वर्षा कर रहे हैं। हृदयके भीतर

गुणोंका समूह, गुणोंका सागर उड़ेल रहे हैं। वे गुण

विकसित हो रहे हैं तथा नेत्रोंके द्वारा सारे संसारमें फैल

रहे हैं और उन गुणोंके सागरमें हमलोग भी एकदम मग्न

हो रहे हैं। भगवान्के ऐसे रूप और लावण्यको देखकर

हम मुग्ध हो रहे हैं। उनका स्वरूप-लावण्य कामदेवसे

भी बढ़कर है, कोटि कामदेवके मिलनेसे भी ऐसा स्वरूप

चिन्तन—ये सभी अमृतमय, आनन्दमय, प्रेममय, रसमय हैं। हम अलौकिक रसका आस्वादन कर रहे हैं और मुग्ध हो रहे हैं, परंतु ऐसा ध्यान कभी-कभी होता है,

यह साधारण बात है। इससे उच्चकोटिकी बात यह है

िभाग ८९

कि ध्यानके साथ-साथ भगवान्का अलौकिक प्रभाव, ्रासींग्रेतपांड्स विंडिंद्रपुर हिंदुर सुर्गन्य आ रही है और gg/dharma । MADE WITH LOVE BY Avinash/Sha

संख्या ५] क्रक्रक्रक्रक्रक्रक्रक्रक्रक्रक्रक्रक्रक	सेवा, जप, ध्यान, प्रे ******	म तथा व्याकुलता ५ ५ ५ ५ ५ ५ ५ ५ ५ ५ ५ ५ ५ ५ ५ ५ ५ ५ ५
		दर्शन दें, इस बातकी उसे आकांक्षा नहीं रहती। वह तो
चरित्रोंके साथ गुण तो लगे हुए है	-	उस ध्यानको ही सबसे बढ़कर समझता है। वह तो सब
कोई लीला कर रहे हैं। किसी प्रका	`	समय उस ध्यानमें ही मुग्ध रहता है। भगवान्को गरज
रहे हैं। भगवान् श्रीराम मुनियोंके अ		हो तो आकर दर्शन दें, उसे गरज नहीं। दोनोंमें जिसमें
बात कर रहे हैं, उनकी वाणीमें जो		अधिक प्रेम होगा, जो प्रेमकी अधिक इज्जत करेगा,
है और बर्तावमें जो अलौकिकता है,		प्रेमको जो ज्यादा महत्त्वपूर्ण समझेगा, उसे ही ज्यादा
है, प्रेम भरा हुआ है। उनका जाना वे	•	गरज पड़ेगी, उसीको आना पड़ेगा। भक्तको क्या गरज ?
्र लिये है, उसमें भगवान्का कोई स्व		इसी प्रकार विरहकी व्याकुलता भी है। विरहकी
उनके प्रेमके लिये, उनमें जो श्रद्धा		्र व्याकुलता—दूसरी लाइन है। विरहकी व्याकुलतामें
संसारके हितके लिये ही उनका		ध्यान तो इसी प्रकार होता है, किंतु वह भगवान्का
समयपर इस प्रकारका अनुभव होना		साक्षात्कार—दर्शन चाहता है, दर्शनके बिना उसे बहुत
इस प्रकारकी स्मृति रहे तो यह भगव	गन्का सामान्य ध्यान	व्याकुलता होती है। जैसे युवा स्त्रीका पति विदेशमें हो
है। इससे भी बढ़कर जो ध्यान होता	है उसमें भगवान्का	और वह पतिके वियोगमें समय-समय व्याकुल भी होती
ध्यान प्राय: लगा ही रहता है। उसमे	iं भूल बहुत ही कम	है, रोती भी है। इस प्रकारकी व्याकुलता साधारण
होती है। भूल होनेसे वह एकदम व	याकुल हो जाता है,	व्याकुलता है। भगवान्के विरहकी व्याकुलतामें तो चैन
उसको बर्दाश्त नहीं कर सकता।	चलते, उठते-बैठते,	ही नहीं पड़ता। जैसे भगवान्के विरहकी व्याकुलतामें
खाते–पीते सब समय उनका ध्यान	। बना रहता है एवं	भरतजीकी दशा हुई। जब ऐसी दशा पराकाष्ठाको पहुँच
एकान्तमें और विशेषरूपसे हो जाता	है तथा बाकी समय	गयी तब—
साधारण रूपसे रहता है। यह भगवा	न्का मुख्य ध्यान है।	राम बिरह सागर महँ भरत मगन मन होत।
जब इससे और आगे बढ़ जाता है	तब सब समय वह	बिप्र रूप धरि पवनसुत आइ गयउ जनु पोत॥
ध्यान एक–सा ही रहता है। चाहे एव	क्रान्तमें बैठकर ध्यान	(रा०च०मा० ७।१क)
करे, चाहे चलते, उठते-बैठते, खाते-	पीते करे, भगवान्की	रामका वियोग एक सागर है, उसमें भरतका मन
मोहिनी मूर्ति उसके हृदयसे दूर ह	ग्रेती ही नहीं। जैसे	मगन हो रहा है। उस समय जैसे डूबते हुएके लिये
गोपियोंके हृदयसे भगवान् कृष्णकी	मूर्ति कभी दूर होती	नौका आ जाती है, इसी प्रकार ब्राह्मणका रूप धारण
ही नहीं। वहाँ अनन्य श्रद्धा है, अ	नन्य प्रेम है, अनन्य	करके हनुमान्जी वहाँ आ पहुँचे और खबर दी कि
ध्यान है, अनन्य चिन्तन, अनन्य स	मरण है। जब इससे	भगवान् श्रीराम सीताजी और लक्ष्मणजी-सहित आ
भी और बढ़कर हो जाता है तो वह	इ ध्यानमें ऐसा मुग्ध	रहे हैं। जैसे प्यासे आदमीको अमृत पिला दिया जाय
हो जाता है कि उससे वियोग हो ही	ो नहीं सकता। फिर	और उसे जो आनन्द हो, उससे भी बढ़कर भरतको
उसका ध्यान वह करता नहीं, अपन	ने-आप ही होता है,	आनन्द हुआ। जैसे तड़फती हुई मछलीको जलमें
उससे छूट नहीं सकता, उसकी स	ामर्थ्य नहीं कि उसे	डाल दिया जाय तो मछलीको जो आनन्द होता है,
छोड़ सके। ऐसा ध्यान स्वाभाविक व	ही अपने-आप होता	उससे भी बढ़कर आनन्द भरतजीको हुआ। ये सब
रहता है। उस समय उस ध्यानको व	ह भगवान्के साक्षात्	उदाहरण उनके लायक नहीं हैं, इसके अनुरूप तो
मिलनेसे भी बढ़कर समझता है। भग	ावान् साक्षात् आकर	कोई उदाहरण ही नहीं है।

भाग ८९ विरहको व्याकुलताका मार्ग भरतजी-जैसा है। वे भगवान्के अन्तर्धान होनेके बाद गोपियाँ विरहमें व्याकुल होकर उन्हें वनमें ढूँढ़ती रहीं। वह बहुत ही विरहमें इतने व्याकुल हैं कि बिना भगवान्के पहुँचे वे उच्चकोटिकी व्याकुलता है। उससे भी बढ़कर वह जीवित नहीं रह सकते। जैसे गोपियाँ—गोपियाँ विरहमें व्याकुलता है, जब इतनी व्याकुलता बढ़ गयी कि उनके इतनी व्याकुल हैं कि वे बिना भगवान्के आये जी नहीं प्राण जानेकी तैयारी हो गयी, तब भगवान् फिर प्रकट सकतीं। जैसे रुक्मिणी—भगवान् रुक्मिणीजीके विवाहके समय पहुँचे और उन्हें उठाकर रथमें बैठाकर ले आये। हुए। भगवान्की व्याकुलतामें चैन नहीं पड़े, भोजनकी रुचि ही न रहे, रातमें नींद नहीं आये, दिनमें कोई चीज यदि वे नहीं पहुँचते तो रुक्मिणी विरहमें व्याकुल होकर अच्छी नहीं लगे, खाना-पीना कुछ भी अच्छा नहीं लगे। प्राणोंका त्याग कर देतीं। जैसे भगवती सीता—सीता केवल भगवान्के सिवाय दूसरी वस्तु अच्छी लगे ही रावणकी अशोकवाटिकामें इतनी व्याकुल हो रही हैं कि नहीं। ऐसेमें भगवान् रह नहीं सकते, तुरंत ही प्रकट हो यदि भगवान् वहाँ नहीं पहुँचते तो वे जी नहीं सकती जाते हैं। पहले साधारण ध्यानकी बात कही गयी, उसके थीं। इसी प्रकार जहाँ-कहीं भी व्याकुलताका प्रकरण बाद ऐसा ध्यान करना नहीं पड़ता, अपने-आप होता ही आता है, उससे ये बातें समझ लेनी चाहिये। इसी प्रकार रहता है, वह ध्यानकी ऊँची श्रेणी है। यहाँतक विरहमें आनन्दमें जो मनुष्य मुग्ध हो जाता है, वहाँ भगवान्से व्याकुलता और प्रेममें अधीरता दोनोंकी एक-सी ही बात भी बढ़कर भगवानुका ध्यान मालूम देता है। वास्तवमें है। वहाँसे अलग-अलग लाइन हो गयी। भगवान्का साक्षात् दर्शन भगवान्के ध्यानसे भी बहुत ही प्रेमी तो आनन्दमें मुग्ध हो गया और ध्यान ही बढ़कर है, किंतु उस समय वह ध्यानमें इतना मुग्ध रहता है कि वह साधक ध्यानको इतना बढ़कर समझता है चाहता है, भगवान्को नहीं चाहता तथा विरही भगवान्का और उसे इतना विश्वास है कि जैसे मैं भगवान्को साक्षात् दर्शन करना चाहता है। अगर भगवान् प्रकट नहीं होते तो वह बर्दाश्त नहीं कर सकता। विरहमें चाहता हूँ वैसे ही भगवान् भी मुझे चाहते हैं। मैं तो व्याकुलताकी प्रधानता है तथा प्रेममें आनन्दकी प्रधानता भगवान्के पास नहीं पहुँच सकता, पर भगवान् तो पहुँच है, प्रसन्नताकी प्रधानता है। सभी जगह उसके लिये सकते हैं, अतः मुझे बुलानेकी क्या जरूरत है। जहाँ प्रेम उदाहरण तैयार हैं। जैसे आनन्दकी मुग्धतामें प्रह्लाद, है, वहाँ अपने-आप ही आयेंगे। स्तीक्ष्ण हैं। तुलसीकृत रामायणमें स्तीक्ष्णका जो स्वरूप अबतक भगवान्के प्रेमकी बात कही, भगवान्के बताया, उसके अनुसार वे भगवान् रामके ध्यानमें मस्त विरहको भी कुछ बात कही। अब भगवान्के मिलनेकी इच्छाकी बात कही जाती है— हो गये। भगवान्के आनेपर भी भगवान्का ध्यान छोड़ना नहीं चाहते। ध्यानको भगवान्के दर्शनोंसे भी बढ़कर भगवान्के मिलनेमें जैसे भगवान्के नामका जप समझ रहे हैं। जैसे सूरदास कहते हैं कि मुझे पुन: और भगवान्के स्वरूपका ध्यान साक्षात् कारण है, इसी सूरदास बना दो ताकि केवल आपका ध्यान बना रहे और प्रकार भगवान्के मिलनेकी इच्छा भी कम नहीं है, बल्कि उससे बढ़कर हम कह सकते हैं। भगवान्का भजन कुछ भी नहीं चाहता। जैसे प्रह्लाद भगवान्के जप और ध्यानमें मस्त रहे, भगवानुके आनेके लिये भी प्रार्थना नहीं करनेसे, ध्यान करनेसे, सत्संग करनेसे जैसे भगवान्में प्रेम करते। जो भगवान्के प्रेम और ध्यानमें, आनन्द और बढ़ता है, इसी प्रकार भगवान्से मिलनेकी इच्छा करनेसे शान्तिमें मुग्ध हो रहे हैं, वे भगवान्की भी इच्छा नहीं भी भगवान्में प्रेम बढ़ता है और भगवान्में प्रेम होनेसे करते। भगवान् अपने-आप बिना बुलाये आते हैं। ही मिलनेकी इच्छा होती है, यह अन्योन्याश्रित है। जैसे

```
संख्या ५ ]
                                      'शरण तिहारी आयो'
चित्तमें वैराग्य होनेसे साधन तेज होता है और साधन तेज
                                                विचार हैं कि भगवान् हैं; मिल सकते हैं पर हमारा इतना
                                                साधन नहीं है, हम कमजोर हैं, इस कारण वे निराश
होनेसे वैराग्य उत्पन्न होता है, इसी प्रकार साधन तेज
होनेसे भगवान्में प्रेम होता है और भगवान्में प्रेम होनेसे
                                                हो जाया करते हैं, किंतु यह उनकी गलती है। हमको
साधन तेज होता है। यदि हम यह कहें कि जप और
                                                हमारी तरफ क्यों देखना चाहिये ? हमको तो भगवानुकी
ध्यानकी इतनी आवश्यकता नहीं है जितनी कि भगवान्के
                                                तरफ, भगवान्के विरदकी तरफ देखना चाहिये, भगवान्के
                                                स्वभावकी तरफ देखना चाहिये। जो आदमी भगवान्की
मिलनेकी इच्छा होनी चाहिये, लगन होनी चाहिये, किंतु
भगवान्के मिलनेकी लगन होगी तो भजन-ध्यान तो
                                                तरफ देखता है, वह कभी निराश नहीं होता। जैसे
अपने-आप ही होगा। इसीलिये यह कहा जा सकता है
                                                भरतजी कहते हैं कि-
कि भगवान्के मिलनेकी खूब लगन होनी चाहिये।
                                                जन अवगुन प्रभु मान न काऊ। दीन बंधु अति मृदुल सुभाऊ॥
भगवान्के मिलनेकी तीव्र इच्छा भगवान्के प्राप्त होनेका
                                                     भगवान् अपने दासोंके दोषकी तरफ नहीं देखते,
खास उपाय है। भगवान्के मिलनेकी एक तो साधारण
                                                उनका स्वभाव बड़ा ही कोमल है। वे दीनोंके बन्धु हैं
इच्छा होती है, एक होती है गौण इच्छा और एक होती
                                                और इसीके भरोसेपर भरतजीका यह भाव है कि भगवान्
है विशेष इच्छा। इस प्रकार इच्छाके कई भेद हैं। इस
                                                मुझे मिलेंगे। इससे भी बढ़कर जब और अधिक इच्छा
समय अधिकांश मनुष्योंकी सांसारिक भोग-पदार्थोंकी-
                                                हो जाती है कि भगवान्से मिले बिना वे जी नहीं सकते।
                                                भगवान्के प्रेममें ऐसा हो कि भगवान्का वियोग बर्दाश्त
कंचन, कामिनी, मान, बड़ाई, प्रतिष्ठा, शरीरका आराम,
भोग आदिकी तो मुख्य इच्छा है और भगवान्के
                                                नहीं कर सके और भगवान्के बिना एक क्षण भी उसके
मिलनेकी गौण इच्छा है; क्योंकि बहुतसे लोग तो ऐसा
                                                प्राण रह नहीं सके। जब ऐसी अवस्था हो जाती है तब
समझते हैं कि भगवान्का मिलना कठिन है। अतः वे
                                                वह तीव्रतर अवस्था कहलाती है। जब तीव्रतम इच्छा
निराश-से हो रहे हैं। बहुतसे जो नास्तिक हैं, ऐसा
                                                हो जाती है, भगवान् उसी समय आ ही जाते हैं फिर
समझते हैं कि भगवान् हैं ही नहीं, न कभी मिले हैं और
                                                रुक नहीं सकते। एक क्षण भगवान् नहीं आवें तो प्राण
न कभी मिलेंगे, ये सब फालतू बातें हैं, उनकी तो कभी
                                                रह ही नहीं सकते। भगवान्के मिलनेकी तीव्रतम इच्छा
इच्छा हो ही नहीं सकती। जिनकी दृष्टिमें भगवान् हैं
                                                होनी चाहिये, फिर भगवान् नहीं रुक सकते। तीव्रतरमें
ही नहीं, उनमें मिलनेकी इच्छा क्यों होगी और जिनके
                                                भी आ सकते हैं, पर तीव्रतममें तो एक क्षण भी नहीं
                                                रुक सकते। इस प्रकार भगवान्की व्याकुलताका रूप
हृदयमें यह इच्छा है कि भगवान हैं तो सही किंतू हम
उसके लायक नहीं, हम कमजोर हैं और जिनके ये
                                                आपको बतलाया।[समाप्त]
                                 'शरण तिहारी आयो'
                                    ( श्रीगोपीनाथजी पारीक 'गोपेश')
                                       सतायो।
                                                                               ક્ષ
                   विषयन लिपट रह्यो निशि वासर कबहुँ न हरि गुण गायो॥
                                                                               કુટ
              ક્ષું
                                पाखंड पाप कूँ रहत सदा
                                                                  अपनायो।
                                                                               ક્ષ
              ક્ષ
                   हरिजन विमुख रह्यो तन मन सौं सत् संगति बिसरायो॥
                                                                               ક્ષ
              ક્ષુ
                   लोभ पाश सौं बंध्यो रैन दिन सदा चित्त ललचायो।
              ક્ષુ
                                                                               ક્ષુ
             ક્ડિ
                   सब परिणाम निराशामय लख सिर धुनि धुनि पछतायो॥
                                                                               ક્ષુ
                                  पतितपावनप्रभु
                                                  शरण
             ક્ષુ
                   अशरणशरण
                                                           तिहारी
                                                                    आयो।
                                                                               ક્ષ
                                                                   लगायो॥
                   प्रणतारतिभंजन
                                    यदुनन्दन
                                             हिय
                                                        'गोपेश'
                                                                              ક્ડિ
```

िभाग ८९ 'लौ' (पं० श्रीभुवनेश्वरनाथजी मिश्र 'माधव', एम० ए०) आनेका ध्यान भी न रहे। बाहरके किसी भी पदार्थके ज्यों तिरिया पीहर बसै, सुरित रहै पिय माहिं। ऐसे जन जगमें रहैं, हरिको भूलत नाहिं॥ अस्तित्वका भान भी न हो। कोई रूप आँखोंको लुभा विवाहिता स्त्री मायकेमें रहते हुए जिस प्रकार मन, न सके, कोई शब्द कानोंको मोह न सके। स्मृति सदा चित्त और प्राणसे अपने पतिका ही स्मरण करती रहती हरिके चरणोंको छूती रहे। प्राण सदा प्रभुके पाद-पद्मोंमें है, उसी प्रकार इस संसारमें रहते हुए भी हम अपने प्रणिपात करते रहें। यही अखण्ड जागरण है। प्राणाराम जीवनधन हरिका ही स्मरण करते रहें-यही हंसा पाये मानसरोवर ताल तलैया क्यों डोलै? वहाँके आनन्द और शोभाका वर्णन कैसे किया सभी सन्तों और समस्त धर्मग्रन्थोंके उपदेशका सारतत्त्व है। जीवकी यही साधना है। मनुष्यका यही परम कर्तव्य, जाय ? वहाँकी तो चर्चा भी नहीं हो सकती। बात चलते सर्वोत्तम धर्म है। मनको हरिमें डालकर मस्त हो जाना ही जो थहराने लगता है। जिसने एक बार भी उस रसका आस्वादन किया है, उसके लिये फिर वहाँसे हटना ही आनन्दकी चरम अवस्था है। जप, तप, पूजा, पाठ, तीर्थ, व्रत, सेवा, दान, सत्संग, सदाचार—सभी प्रकारके कठिन ही नहीं, अपितु असम्भव है— सत्कर्मोंका फल है श्रीवासुदेवका अखण्ड स्मरण। यह चरचा करी कैसे जाय। स्मरण ही भगवान्के चरणोंमें सच्ची प्रणति है; यह बात जानत कछुक हमसों, कहत जिय थहराय॥ स्मरण ही सर्वात्मसमर्पणकी सच्ची अभिव्यक्ति है। कथा अकथ सनेहकी उर नाहिं आवत और। घनीभूत अखण्ड स्मरणकी हँसती हुई ज्योतिका नाम है बेद समृती उपनिषदकों, रही नाहिंन ठौर॥ 'लो'। साधनाका प्राण है स्मरण और 'लो' है स्मरणकी सच्चे प्रेमीको प्रियतमका स्मरण करना नहीं पड़ता। जबतक स्मरण करना पड़ता है, जबतक स्मरण और आत्मा। 'लौ' का साधारण अर्थ है दीपकका जलता हुआ विस्मरणका युद्ध जारी है तबतक तो 'उस'से प्रेम क्या, प्रकाश। दीयेमें तेल भर दिया जाता है, बत्ती डाल दी परिचय भी नहीं हुआ ऐसा ही मानना चाहिये। पत्नी जाती है और सलाईसे उसे एक बार जला देते हैं। फिर पतिके नामकी माला नहीं जपती। वह एकान्तमें आँखें जबतक तेल दीयेमें है, बत्ती बनी हुई है और बाहरके मूँदकर, आसन मारकर, प्राणायाम आदि करके पतिके आँधी-तूफानसे वह सुरक्षित है, तबतक वहाँ प्रकाश बना ध्यानमें डूबने नहीं जाती। वह सब कामोंसे छुट्टी लेकर रहेगा, लौ जलती रहेगी। ध्यान इस बातका रखना होगा सत्संगका सेवन, तीर्थोंमें घूमना, दान-पुण्य करना आदिमें कि तेल समाप्त न होने पाये, बत्ती बुझने न पाये और अपने जीवनको इसलिये नहीं लगाती कि इनके फलस्वरूप जहाँ अखण्ड दीपकी बात है, वहाँ तो सतत सावधान उसे अपने पतिका स्मरण-ध्यान होगा। ऐसा करना रहना ही पड़ेगा। एक क्षणकी विस्मृतिमें दीपकके बुझ उसके लिये अस्वाभाविक होगा। ऐसा करके वह स्वयं जाने और घोर अन्धकारके घिर आनेकी आशंका है। अपनी दृष्टिमें तथा लोगोंकी दृष्टिमें उपहासास्पद बनेगी। ठीक यही बात अन्तरकी 'लौ' के सम्बन्धमें है। वह वैसा करने ही क्यों जायगी? अपने प्राणप्यारे प्रियतमके वहाँ भी सतत सावधान रहना पडता है। एक पलके लिये स्मरणके लिये भला योग, जप, तप, ध्यान और एकान्तकी भी वृत्ति बहिर्मुख हुई नहीं कि सब कुछ मिटा। मन, आवश्यकता ही क्या है? वह स्मरण स्मरण नहीं, जो प्राण, चित्त, बुद्धि, आत्मा—सभी श्रीहरिके चरणोंसे करनेसे हो। वह ध्यान ध्यान नहीं, जिसमें डूबनेके लिये झरते हुए मकरन्दका पान करते रहें। वहीं, उस परम घोर परिश्रम और कठिन प्रयत्न करना पड़े। वह प्रेम प्रेम

दिसांगर्यपांदका पांवन्णपुन्निहास्व भुषाञ्चनं प्रहुत व्यक्ति विस्ति प्रमाना किस्सि प्रमान्यस्य सहिन स्मृति ने सा विहास्य विस्ति प्रमाने विद्यार

संख्या ५] 'लौ	११
\$	
प्यार नहीं, जो बिना बुलाये, अपने आप ही उमड़-	मायाकी मोहिनी नहीं चलती। यहाँ तो सतत जागरण है।
घुमड़कर हमारे हृदयके आँगनमें न बरसे।	यहाँकी बेहोशी संसारकी सारी बुद्धिसे परेकी है और
बिरह जगावै दरदको, दरद जगावै जीव।	इसीलिये संसारकी किसी भी वस्तुका आकर्षण वहाँ है
जीव जगावै सुरतको, पंच पुकारै पीव॥	ही नहीं। वहाँ तो परमरस, 'रसो वै सः' को पाकर
रोम-रोममें प्रियतमकी पुकार है। रोम-रोम उसकी	संसारके विविध रसोंकी ओरसे सहज ही उपेक्षा हो जाती
प्यारभरी स्मृतिमें पगे हुए हैं और कोई वस्तु है ही नहीं,	है। यह तो आत्मरतिकी सहज स्थिति है। यही सहज
जो चित्तको एक क्षणके लिये भी अपनी ओर आकृष्ट	समाधि है।
कर सके। प्रतिपल प्यारेकी स्मृति एक अजीब अदाके	परंतु इस स्थितिमें प्रवेश किया कैसे जाय?
साथ आ–आकर प्राणोंको नहला जाती है, सराबोर कर	संसारके कोलाहलसे ऊपर उठकर, जगत्के विषयोंके
जाती है। ध्यान जमानेके लिये त्राटक आदि मुद्राओंका	मस्तकपर पैर रखकर हम उस परम प्रियतमके प्रेमका
सहारा नहीं लेना पड़ता और न आँखें ही बन्द करनी	आस्वादन करें कैसे ? यह स्थिति जनसाधारणके लिये तो
पड़ती हैं। उनके नूपुरोंकी ध्वनि सुननेके लिये कान मूँदने	अप्राप्य-सी ही दीखती है। परम प्रेमकी इस स्थितिमें
नहीं पड़ते और न पहाड़की खोहमें जाकर एकान्तवासकी	प्रवेश करनेके लिये हमें एक बार प्राणपनसे लगना
ही आवश्यकता है; यहाँ तो—	होगा। माता-पिताके प्यारमें पली हुई कन्या पतिकी
आँख न मूँदौं कान न रूँधौं तनिक कष्ट नहिं धारौं।	परिणीता होकर पाणिग्रहण, ग्रन्थि-बन्धन और सिन्दूरदानके
खुले नैन पहिचानौं हँसि हँसि सुन्दर रूप निहारौं॥	अनन्तर सदाके लिये, जन्म-जन्मान्तरके लिये अपने
खुली आँखों अपने प्राणेश्वरको देखूँ तभी तो	पितकी हो जाती है। आश्चर्य होता है कि जिस घरमें
देखना है। खुले कान उनकी वंशी और नूपुरकी ध्वनि	वह इतनी सयानी हुई, वही घर उसके लिये पराया हो
सुन सकूँ तभी तो सुनना है। सारे रूप, विश्वके विविध	जाता है; और एक पुरुष, जिससे पहले वह सर्वथा
रूप उस एक अपरूप रूपमें पलट जाय; जगत्का सारा	अपरिचित थी, उसीकी वह एकान्तत: हो जाती है। वह
कोलाहल, हाहाकार और चीत्कार मुरलीकी मधुरध्वनि	अपना कुल, गोत्र, नाम सब कुछ पतिके कुल, गोत्र और
होकर हमारे कानोंमें समा जाय; जो कुछ सुनूँ, देखूँ,	नाममें लय कर देती है। यह प्राय: हम सभीका देखा
स्पर्श करूँ सभीमें प्राणवल्लभका मौन निमन्त्रण स्पष्ट	हुआ, अनुभव किया हुआ रहस्य है।
दीख-सुन पड़े तब तो समझना चाहिये कि उनके प्रेमका	ठीक वही बात यहाँ भी है। जगत्के प्रपंचोंमें पला
आस्वादन हमारे प्राणोंने किया है। नहीं तो, सब कुछ	हुआ प्राणी, जगत्के विषयोंमें रचा-पचा पुरुष एक
कोरा हठयोग ही है।	क्षणके इस विद्युत्-स्पर्शमें अपना लोक-परलोक, पाप-
एक क्षणके लिये भी जिसे हरिका स्पर्श मिल गया,	पुण्य, सुख-दु:ख—अपना सब कुछ हरिके चरणोंमें
वह उस रसको पूरे पिये बिना रह कैसे सकता है ? वहाँ	निवेदित कर सदाके लिये 'उस' का बिना मोलका चेरा
तो पग-पगपर एक अद्भुत आकर्षण बलात् प्राणोंको	हो जाता है। खेल-खिलवाड़में ही वह पहले इस ओर
किसी 'अपने' की ओर खींचे लिये जा रहा है और इस	आनेको ललकता है परंतु एक बार जहाँ इधर पैर रखा
मार्गमें चलते हुए एक विचित्र उल्लास संगी बना रहता	कि फिर अपना सर्वस्व अर्पित कर देनेकी ही सनक
है। वहाँ मिलन और विरहका अद्भुत सम्मिश्रण है। वह	सवार हो जाती है। यह विवशता भी कितनी दिव्य है!
अखण्ड मिलन एवं आमरण विरहकी अवस्था है। यहाँ	'पिय-परिचय' की वह दिव्य बेला साधकके लिये
मिलन और विरह दोनों घुले-मिले हुए हैं। इस स्थितिमें	परम महोत्सवकी बेला है।'परिचय' हो जानेपर समर्पण
काम, क्रोध, लोभ, मोह आदिकी गति है ही नहीं। यहाँ	करना नहीं पड़ता। वह आप-ही-आप हो जाता है। वहाँ

चारों ओरसे संयम नहीं करना पडता। पियके प्राणमें प्राण जो बिछुड़े हैं पियारेसे, भटकते दर-बदर फिरते।

घुल-से जाते हैं, अतएव वहाँ सहज एकाग्रता होती है।

वहाँ सब धर्मींके बन्धनको छोडने नहीं जाना पडता: **'सर्वधर्मान्परित्यज्य'** सुनना नहीं पडता। सभी धर्म आप-

ही-आप छूट जाते हैं। सभी धर्म अपना फल देकर,

छिप जाते हैं—और वहाँ साधक अपने प्रियतमका प्रेमास्पद बनकर उसके परम प्रेममें अहर्निश छका रहता है।

जिसे मैं चाहता हूँ, वह एक बार मेरी ओर निहारे—यह मानवहृदयकी सहज दुर्बलता है। अपने

प्रियतमका प्रेम प्राप्त करना प्रेम-साधनाकी एक छिपी हुई साध है और वहाँ तो प्रियतमकी ओरसे प्रेमकी

अखण्ड वर्षा होती रहती है, जिसमें प्रेमीके प्राण सदा नहाते रहते हैं। यही बेखुदीकी हालत है।

अपनेको उसके प्रियमिलनमें बाधक समझकर चुपचाप

हमन हैं इश्क मस्ताना, हमनको होशियारी क्या? रहैं आजाद या जगसे, हमन दुनियासे यारी क्या?

मेरी आत्मा एक शरीरसे दूसरे शरीरमें, एक रूपसे दूसरे

रूपमें, एक नामसे दूसरे नाममें ढलती आयी है, उस परम प्रियतमको पाकर अब क्यों छोड़ना? आओ, उसे सदाके

लिये प्राणोंमें छिपा लें और आँखोंकी कोठरीमें पुतलीका पलंग बिछाकर और बाहरसे पलकोंकी चिक डालकर

मीराने गाया था—

ऐसे पियै जान न दीजै हो।

उसके रसको पीते रहें। इसके आगे अब करना ही क्या रहा ?

अशुद्ध कमाई तथा शुद्ध कमाईके धनका प्रभाव-

हमारा यार है हममें, हमनको इन्तजारी क्या?

अपरिचित-सा था। अन्तरका पट हटा और वह सामने

आया और सामने आनेपर तो हम सभी वही गायेंगे जो

चलो री सखी! मिलि राखिये नैननि रस पीजै हो॥

युग-युगसे, जन्म-जन्मसे जिस प्राणाराध्यकी खोजमें

हृदयदेशमें छिपा हुआ वह कितनी दूर सर्वथा

भाग ८९

सन्त अबुल अब्बास अपने उपदेशमें कहा करते थे-प्रत्येक व्यक्तिको अपने हाथोंसे परिश्रम करके

उस कमाईसे जीवन-यापन करना चाहिये। ईमानदारीकी कमाईसे ही बरकत होती है। वे स्वयं टोपियाँ सिलते

तथा उन्हें बेचकर जो धन मिलता, उसमेंसे आधा जरूरतमन्दको दे देते और आधेसे स्वयं अपना खर्चा चलाते। एक दिन उनका एक धनिक भक्त दर्शनोंके लिये आया। उसने कहा—'बाबा! मैं अपने कमाये धनमेंसे

कुछ धन दान करना चाहता हूँ। मैं दान किसे दूँ?' सन्तने कहा कि जिसे जरूरतमन्द समझो, उसे दे दो। धनिकने एक वृद्ध भिखारीको देखा तथा उसे सोनेकी एक मोहर दे दी। अगले दिन धनिक सड़कपर जा रहा था कि उसने उस भिखारीको दूसरे भिखारीके पास बैठा देखा। उसने दूसरे भिखारीसे कहा—'कल

एक दानी व्यक्ति यहाँ आया था, उसने मुझे सोनेकी मोहर दी, मैंने उसे बेचकर खूब बढ़िया खाना खाया, शराब पी तथा रातको अय्याशी की।' धनिकने यह वार्तालाप सुना तो उसे बहुत दु:ख हुआ। वह सन्त

अब्बासके पास पहुँचा तथा यह बात उन्हें बतायी।

सन्त अब्बास उसकी बात सुनकर मौन हो गये। उन्होंने अपनी टोपियोंकी कमाईका एक सिक्का उस धनिकको दिया और बोले—'इसे किसी याचकको दे देना और उसके पीछे-पीछे जाकर देखना कि वह

इसका क्या करता है।' धनिकने वह सिक्का एक याचकको दे दिया।

याचक सिक्का लेकर जंगलकी ओर गया तथा उसने थैलेमें छिपाये पक्षीको उड़ा दिया। धनिकने पूछा—

'तुमने यह क्या किया?' वह बोला—'मेरा परिवार कई दिनसे भूखा था। मजबूरीमें खानेके लिये पक्षीको पकड़कर लाया था। अब तुम्हारे दिये सिक्केसे भुख मिट जायगी, इसलिये पक्षीकी हत्याका पाप मोल क्यों लूँ।' धनिक समझ गया कि उसने छल-कपट तथा गलत तरीकेसे अर्जित धन वृद्ध भिखारीको दिया तो उसने उसका दुरुपयोग किया और सन्तजीके ईमानदारी-मेहनतसे कमाये धनने उस याचकको पक्षीके प्राणोंकी

रक्षाकी प्रेरणा दी।—श्रीशिवकुमारजी गोयल

संख्या ५] भजन क्यों नहीं होता? भजन क्यों नहीं होता? (नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार) भगवान् एक हैं, उन्हींसे अनन्त जगत्की—जगत्के विषयासक्ति तथा विषयकामनाके वश होकर नीच समस्त चेतनाचेतन भूतोंकी उत्पत्ति हुई है, उन्हींमें सबका कर्मोंमें ही लगे रहते हैं और अपने मानव-जीवनको निवास है, वे ही सबमें सदा सर्वत्र व्याप्त हैं, अतएव अधम बना चुके हैं, मायाके द्वारा जिनका विवेक हरा उनकी भक्तिका, उनके ज्ञानका और उनकी प्राप्तिका जा चुका है और जो असुरोंके भाव-काम, क्रोध, अधिकार सभीको है। किसी भी देश, जाति, धर्म, वर्ण, लोभादिका आश्रय लेकर जीवनको आसुरी बना चुके वर्गका कोई भी मनुष्य—स्त्री-पुरुष अपनी-अपनी विशुद्ध हैं।' ऐसे लोग न तो भगवान्में श्रद्धा रखते हैं और न पद्धतिसे भगवानुका भजन कर सकता है और उन्हें प्राप्त भजनकी ही आवश्यकता समझते हैं, वे दिन-रात नये-कर सकता है, परंतु भजनमें एक बड़ी बाधा है-वह नये पाप-कर्मोंमें प्रवृत्त होते रहते हैं, विविध प्रकारके बाधा है भगवान्में अविश्वास और संसारके भोगोंमें पाप करके गौरवका अनुभव करते और सफलताका अभिमान करते हैं एवं पापोंको ही जीवनका सहारा विश्वास; बस, इसी कारण-इसी मोह या अविद्याके जालमें फँसा हुआ मनुष्य भगवानुका कभी स्मरण नहीं मानकर उत्तरोत्तर गहरे भव-समुद्रमें डूबते जाते हैं। करता और भोग-विषयोंके लिये विभिन्न प्रकारके दूसरे वे पापी हैं, जो परिस्थिति या दुर्बलताके कारण कुकार्य करनेमें अपने अमूल्य जीवनको खोकर आगेके बड़े-से-बड़ा पापकर्म तो कर बैठते हैं, परंतु वे उस लिये भयानक दु:खभोगके अचूक साधन उत्पन्न कर पापको पाप समझते हैं, पाप करके पश्चात्ताप करते हैं, लेता है। मनुष्यमें कमजोरी होना आश्चर्य नहीं, वह पाप उनके हृदयमें शूल-से चुभते हैं और वे उनसे त्राण परिस्थितिवश पापकर्म भी कर सकता है, परंतु यदि पाने तथा भविष्यमें पापकर्म सर्वथा न बनें, इसके लिये उसका भगवान्पर विश्वास है, भगवान्के सौहार्द और सदा चिन्तित और सचेष्ट रहते हैं; ऐसे लोग कहीं आश्रय, उनकी कृपापर अटूट और अनन्य श्रद्धा है तो वह आश्वासन न पाकर अन्तमें भगवान्को ही परम आश्रय भगवानुका आश्रय लेकर पाप-समुद्रसे उबर जाता है मानकर करुणभावसे उनको पुकारते हैं। भगवान् कहते हैं— और भगवानुकी सुखद गोदको प्राप्त कर लेता है, परंतु अपि चेत्सुदुराचारो भजते मामनन्यभाक्। जो भोगोंको ही जीवनका एकमात्र ध्येय और सुखका साधुरेव स मन्तव्यः सम्यग्व्यवसितो हि सः॥ परम साधन मानकर उन्हींका आश्रय ले दिन-रात क्षिप्रं भवति धर्मात्मा शश्वच्छान्तिं निगच्छति। उन्हींके चिन्तन, मनन और उन्हींकी प्राप्तिके प्रयत्नमें कौन्तेय प्रति जानीहि न मे भक्तः प्रणश्यति॥ तल्लीन रहता है, उसका जीवन तो पापमय बन जाता (गीता ९।३०-३१) 'अत्यन्त दुराचारी (पापकर्मा मनुष्य) भी यदि मुझ है, वह कभी भगवान्को भजता ही नहीं। भगवान्ने गीतामें दो प्रकारके पापियोंका वर्णन किया है-(भगवान्)-को ही एकमात्र शरणदाता-परम आश्रय मानकर दूसरे किसीका कोई भी आशा-भरोसा न रखकर न मां दुष्कृतिनो मुढाः प्रपद्यन्ते नराधमाः। (पापनाश और मेरी भक्तिकी प्राप्तिके लिये) केवल माययापहृतज्ञाना आसुरं भावमाश्रिताः॥ मुझको ही भजता है, आर्त होकर एकमात्र मुझको ही (७।१५) 'वे पापकर्म करनेवाले मनुष्य तो मुझको पुकार उठता है, उसे साधु ही मानना चाहिये; क्योंकि (भगवान्को) भजते ही नहीं, जो मनुष्य-जीवनके परम उसने एकमात्र मुझ (भगवान्)-को ही परम आश्रय लक्ष्य (भगवत्प्राप्ति)-को भूलकर प्रमाद तथा विषयसेवनमें मानने और केवल मुझको ही पुकारनेका सम्यक् निश्चय लगे रहनेकी ही मूढ़ताको स्वीकार कर चुके हैं, जो कर लिया है। केवल माननेकी ही बात नहीं, वह तुरंत

[भाग ८९ ******************************* ही धर्मात्मा (पापकर्मासे बदलकर धर्मस्वरूप) बन जाता सफल साधन करनेके लिये। इसीके लिये इस जीवनमें विशेषरूपसे 'बुद्धि' दी जाती है, पर मनुष्य परमात्माकी है और भगवत्प्राप्तिरूप परमा शान्तिको प्राप्त होता है। अर्जुन! तुम यह सत्य समझो कि मुझको इस प्रकार दुर्लभ देन—उसी बुद्धिको भोगासिक्तसे पापार्जनमें लगाकर भजनेवाले भक्तका कभी नाश (अध:पात) नहीं होता।' केवल भगवत्प्राप्तिके साधनसे ही वंचित नहीं होता, वरं इन दोनों प्रकारके पापियोंमें यही अन्तर है कि बहुत बड़े पापोंका बोझ लादकर दुर्गतिको प्राप्त होता है! पहला पापको पाप न मानकर गौरव तथा अभिमानकी यह मानवजीवनकी सबसे बडी और महान् दुर्भाग्यरूप विफलता है। इसीसे विषयानुरागी मनुष्यको भाग्यहीन वस्तु मानता है, वह काम-क्रोध-लोभादिरूप आसुरभावको ही परम आश्रय समझकर उसीके परायण रहता है तथा बतलाया गया है— नीच कर्मोंकी सिद्धिमें ही सफलताका अनुभव करता है सुनहु उमा ते लोग अभागी। हिर तिज होहिं बिषय अनुरागी॥ और दूसरा पापी पापको पाप मानकर उनसे छूटना चाहता है और शरणागतवत्सल भगवान्को ही एकमात्र ते नर नरकरूप जीवत जग परम आश्रय मानकर परम श्रद्धाके साथ उनका भजन भव-भंजन-पद-बिमुख अभागी। करना चाहता है। इसीसे यह भजन कर सकता है और निसि-बासर रुचि-पाप असुचि-मन शीघ्र ही पापमुक्त होकर भगवान्को प्राप्त कर लेता है। खल मित-मिलन, निगम पथ-त्यागी॥ पाप बननेमें प्रधान कारण है पापमें अज्ञानपूर्ण श्रद्धा या आस्था। मनुष्यकी विषयोंमें आसक्ति तथा तुलसिदास हरिनाम-सुधा तजि कामना होती है और संग-दोषसे वह पापोंको ही उनकी सठ हठि पियत बिषय-बिष माँगी। प्राप्ति तथा संरक्षण-संवर्धनमें हेत् मान लेता है। फिर सूकर स्वान सृगाल सरिस जन उत्तरोत्तर अधिक-से-अधिक पापोंमें ही लगा रहता है। जनमत जगत जननि दुख लागी॥ संसारबन्धनसे छूटनेके लिये निष्कामभावसे तो वह अत: मानव-जन्मकी सफलता इसीमें है कि मनुष्य भगवानुको भजनेकी कल्पना भी नहीं कर पाता, अथक प्रयत्न करके भगवान्को या भगवत्प्रेमको प्राप्त सकामभावसे भी भगवानुको नहीं भजता, उधर उसकी कर ले। कम-से-कम भगवत्प्राप्तिके पवित्र मार्गपर तो वृत्ति जाती ही नहीं और वह दिन-रात नये-नये पापोंमें आरूढ हो ही जाय। इसके लिये सत्संग करे और उलझता हुआ सदा-सर्वदा अशान्तिका अनुभव करता है सत्संगमें भगवान्के स्वरूप, महत्त्व तथा उनकी प्राप्ति ही तथा परिणाममें घोर नरकोंकी यातना भोगनेको बाध्य मानव-जीवनका एकमात्र परम उद्देश्य है—यह जानकर होता है! भगवान्ने स्वयं कहा है-उसीमें लग जाय। मनुष्यको यह बड़ा भारी मोह हो रहा है कि 'सांसारिक भोगोंमें सुख है।' यह मोह जबतक आसुरीं योनिमापन्ना मूढा जन्मनि जन्मनि। नहीं मिटता, तबतक वह अभी किसी देवताका आराधन मामप्राप्येव कौन्तेय ततो यान्त्यधमां गतिम्॥ भी करता है तो इसके फलस्वरूप वह सांसारिक विषय-(गीता १६।२०) 'अर्जुन! ऐसे मृढ (मनुष्य-जन्मके चरम और परम भोग ही चाहता है। वह छूटना तो चाहता है दु:खसे लक्ष्य) मुझ (भगवान्)-को न पाकर जन्म-जन्ममें-और प्राप्त करना चाहता है सुखको, परंतु विषय-सुखकी हजारों-लाखों बार आसुरी योनिको प्राप्त होते हैं। भ्रान्तिवश मोहसे वह बार-बार प्राप्त करना चाहता है तदनन्तर उससे भी अधम गतिमें—नरकोंमें जाते हैं।' विषय-भोगोंको ही, जो दु:खके उत्पत्ति-स्थान हैं-दु:खके खेत हैं — 'दु:खयोनय एव ते।' भवाटवीमें भटकते हुए जीवको अकारणकरुण भगवान् कृपा करके मनुष्य-शरीर प्रदान करते हैं, यह बिनु सतसंग न हरिकथा तेहि बिनु मोह न भाग। _{दे} सुंक्षिपां <mark>इत्तर Discor</mark>d ही elever https://dag.figg/dharma मह MADE WITH L Riv E Bay Ayinash/Sha

भजन क्यों नहीं होता? संख्या ५] हैं। जो मनुष्य विषय-भोगोंका बाहरसे त्याग करके यह सत्संगके बिना भगवत्कथा सुननेको नहीं मिलती। भगवत्कथाके बिना उपर्युक्त मोहका नाश नहीं होता और मानता है कि 'मैंने बहुत बडा त्याग किया है, कैसे-मोह मिटे बिना श्रीभगवच्चरणोंमें दृढ़ प्रेम नहीं होता। कैसे महत्त्वपूर्ण विषयोंको छोड़कर—घर-द्वार, कुटुम्ब-यह प्रबल मोहकी ही महिमा है कि बार-परिवार, धन-ऐश्वर्य, पद-अधिकारका परित्यागकर वैराग्यको ग्रहण किया है। वह बाहरसे भोगपदार्थींका बार दु:खका अनुभव करता हुआ भी मनुष्य उन्हीं दु:खदायी भोगोंको चाहता है। गोस्वामी श्रीतुलसीदासजीने त्याग करनेवाला होनेपर भी वस्तुत: मनसे भोगोंका त्याग नहीं कर पाया है; क्योंकि उसके मनमें भोगोंकी स्मृति कहा है-ज्यों जुवती अनुभवति प्रसव अति दारुन दुख उपजै। और उनकी महत्ता बनी हुई है, तभी तो वह अपनेको 'बडा त्यागी' मानता है। क्या जंगलमें या पाखानेमें मल है अनुकूल बिसारि सूल सठ पुनि खल पतिहिं भजे॥ त्यागकर आनेवाला मनुष्य कभी तनिक भी मनमें गौरव लोलुप भ्रम गृहपसु ज्यौं जहँ-तहँ सिर पदत्रान बजै। करता है कि मैंने बड़े महत्त्वकी वस्तुका त्याग किया है? तदपि अधम बिचरत तेहि मारग कबहुँ न मृढ लजै॥ 'जैसे युवती स्त्री संतान-प्रसवके समय दारुण क्या उसे उसमें जरा भी अभिमानका अनुभव होता है? दु:खका अनुभव करती है, परंतु वह मूर्खा सारी वेदनाको वह तो एक सहज आरामका अनुभव करता है। इसी प्रकार विषयभोगोंमें मल-बुद्धि या विष-बुद्धि होनेपर भूलकर पुन: उसी दु:खके स्थान पतिका सेवन करती है। जैसे लालची कुत्ता जहाँ जाता है, वहीं उसके सिरपर उनके त्यागमें आराम तो मिलता है, पर किसी प्रकारका जूते पड़ते हैं तो भी वह नीच पुन: उसी रास्ते भटकता अभिमान नहीं हो सकता; क्योंकि उसका वह त्याग है, उस मूढको जरा भी लाज नहीं आती।' भगवान्में महत्त्व-बृद्धि और भोगोंमें वास्तविक त्याग-बस, यही दशा मोहग्रस्त मानवकी है। बार-बार बुद्धि होनेपर भी होता है। ऐसे पुरुषोंका जीवनचरित्र ही दु:खका अनुभव करनेपर भी वह उन्हीं विषयोंमें सुख भोग-लिप्साको दूर करनेवाला मूर्तिमान् सत्संग है। खोजता है। इसी मोहके कारण वह भगवान्का भजन अथवा उनका सत्संग करना चाहिये, जो भगवत्प्रेमके नशेमें चूर होकर या तो संसारको सर्वथा भूल चुके हैं नहीं करता। भगवत्कृपासे जब यथार्थ सत्संग-सूर्यका उदय या जिनको नित्य-निरन्तर समग्र जगत्में केवल अपने होता है, तब मनुष्यकी मोह-निशा भंग होती है और वह प्रियतमकी मधुर मनोहर झाँकी हो रही है।' विवेकके मंगल-प्रभातका दर्शन प्राप्त करता है। यथार्थ सत्संगके द्वारा जितना ही मोहका परदा हटेगा या सत्संग वही है, जो इस मोहका नाश करनेमें समर्थ हो। फटेगा, उतना ही विषय-व्यामोह मिटकर भगवानुका और चित्तका आकर्षण होगा और उतनी ही अधिक जिस संगसे विषय-विमोह और विषयासक्ति बढ़ती है, वह तो कुसंग ही है। यह मोहकी ही महिमा है कि भगवद्भजनमें प्रवृत्ति होगी एवं ज्यों-ज्यों भजनमें निष्कामता, अपनेको साधु, जीवन्मुक्त, भक्त या महात्मा मानने तथा प्रेम और निरन्तरता आयेगी, त्यों-ही-त्यों मोह-निशाका बतलानेवाले लोग भी विषयकामना करते और विषयोंका अन्त समीप आता जायगा। फिर तो मोह मिटते ही भगवान् हृदयमें आ विराजेंगे। विराज तो अब भी रहे हैं, महत्त्व मानते हैं। सच्चे संत, महात्मा या भक्त तो वे ही हैं, जिनका विषय-विमोह या भोग-विभ्रम सर्वथा मिट परंतु हमने अपनी अन्दरकी आँखोंपर परदा डाल रखा गया है। जिनकी दुष्टिमें सांसारिक विषयोंका भगवानुके है और उनके स्थानपर मिलन कामको बैठा रखा है, अतिरिक्त कोई अस्तित्व ही नहीं रहा है और रहा है तो इसीसे वे छिपे हुए हैं। फिर प्रकट हो जायँगे और उनके विनोद या खेलके रूपमें ही। अथवा उन संत-साधकोंका प्रकट होते ही काम-तम भाग जायगा— सत्संग भी बड़ा लाभदायक है, जिनकी दृष्टिमें संसारके जहाँ काम तहँ राम निहं जहाँ राम निहं काम। भोग विष या मलके सदृश घृणित और त्याज्य हो चुके तुलसी कबहुँ कि रहि सकैं रबि रजनी इक ठाम॥

श्रद्धा संस्कृतिका कवच है (श्रीरामनाथ 'सुमन') अपना मानसिक खाद्य ग्रहण करते हैं, वह जहरसे भरा गाड़ी तेजीसे पूर्वकी ओर दौड़ी जा रही थी। इटारसी हुआ होता है। आजकी सभ्यताका यम-नियम और संयमसे आया, रामायणकालीन ऋषि जाबालिके नामावशेष-सा जबलपुर आया और अब सतना बीत रहा था। मेरी सीटके कोई वास्ता नहीं रह गया है। हर एकको बोलनेका अधिकार सामने तीन नवयुवक बैठे दुनियाकी विचारधाराओंका श्राद्ध प्राप्त है, चाहे उसका बोलना वाणीको लज्जित करता हो। कर रहे थे। ज्ञानके नामपर वे कोरे-से लगते थे; अध्ययन जीवनके प्रति ऐसी सस्ती, हल्की वृत्ति देखकर उनका चन्द समाजवादी लोकप्रिय किताबोंतक सीमित था। कभी-कभी बडी निराशा होती है। मस्तिष्क 'स्टीरियोटाइप' से हो रहे हैं। वे अपनी बात नहीं कहते—उनमें चन्द बातें वे मार्क्स और हेकेलकी जरूर कर रहे थे; परंतु मुझे मामूली पुस्तकोंकी छायाभर प्रतिबिम्बित है। फिर भी गर्व सन्देह है कि उन्होंने इनकी कृतियोंका पारायण भी किया यह है कि और लोग 'दिकयानूस' हैं और हमारा

था—वैज्ञानिक अध्ययन और विश्लेषण तो दूरकी बात है।
तीसरे दर्जेकी यात्रा यों ही कुछ कम मनोरंजक
नहीं होती। घटनाएँ लोक-जीवनतक आकर अफवाहोंमें
किस तरह बदल जाती हैं, इसका अच्छा नमूना हमें वहाँ
मिलता है। राजनीति, समाजनीति, अतीत और इतिहास—
सब इस दरबारमें हाथ बाँधे उपस्थित होते हैं और उनका
बहुरूपियापन देखकर आश्चर्य होता है।
हाँ, तो मैं कह यह रहा था कि ये तीनों युवक गाड़ीकी
गतिसे भी अधिक तेजीके साथ दुनियाकी नवीनतम
विचारधाराओंपर बात कर रहे थे और दुनियाके विवेकपर
अपना फैसला भी देते जाते थे। उनका कहना था कि
ईश्वरकी कल्पना (जरा इस शब्दपर ध्यान दीजिये—
'अनुभूति' भी नहीं, केवल कल्पना) पहले तो असंस्कृत
भयके कारण पैदा हुई और फिर लोगोंको पथभ्रष्ट और
भुलाये रखनेके लिये उसपर तरह-तरहकी कलई की गयी।

जिनका दिमाग उसी अनगढ़-'क्रूड'—अवस्थामें है, उनके लिये यह मुबारक हो; पर 'प्रगतिशील' मानसके लिये

ईश्वर फालतू चीज है। जबतक मानव–हृदय इस जंजीरमें जकड़ा हुआ है, समाजका विकास नहीं हो सकता। पहले

हमें इस मूर्खताको हटाकर मानव-जीवनको उन्मुक्त करना

चाहिये, तभी समाजका ठीक तौरपर संघटन हो सकता है।

अधपके और जहरीले विचार बडी तेजीसे फैल रहे हैं।

जीवनमें संस्कारिताका कुछ ऐसा लोप हो रहा है कि हमारे

बच्चे जिस वातावरणमें साँस लेते और पनपते हैं; जहाँसे वे

देशके नवशिक्षित लोगोंमें इस प्रकारके अधकचरे,

थे। लगभग पन्द्रह वर्षसे बम्बईमें रह रहे थे—जीविकाका सवाल उन्हें वहाँ लाया था। जाड़ेके दिन। कपड़े बहुत कम थे। बम्बईके उपयुक्त रहे होंगे, पर भुसावलसे इधर तो उण्ड बढ़ती ही जाती थी। हम अपने गरम कपड़ोंमें भी संकुचित होते जा रहे थे, पर वे किसी भावी पुण्यकी आशासे पुलिकत थे। सर्दीकी तरफ उनका ध्यान न था। मालूम हुआ, तीन दिनकी छुट्टी लेकर तीर्थराज प्रयाग जा रहे हैं। गंगामें डुबकी लगायेंगे और बिछुड़ी माताकी गोदके स्नेहका अनुभव करेंगे। दिनको १० बजे पहुँचेंगे और शामकी गाड़ीसे फिर लौट जायँगे। सालमें पेट काटकर कुछ रुपये जमा किये हैं। उनका इससे उत्तम उपयोग क्या होगा कि चन्द घण्टे पुण्य-तीर्थमें रहनेका सौभाग्य प्राप्त करें।

पहले जब इन्होंने कहा था कि इलाहाबाद आ रहे

हैं, तब मैंने सोचा था कि वहाँ इनका घर होगा। अपने

'देश' जा रहे होंगे। पर जब पीछे असली बातका पता

लगा तो आश्चर्यसे मैं अभिभृत हो गया। थोडी देरमें

इस आश्चर्यने श्रद्धाका रूप ग्रहण किया। मैंने मन-ही-

मन ईश्वरका धन्यवाद किया कि अभी हमारे देशमें हमारी

सभ्यताके कुछ सच्चे प्रतिनिधि बच रहे हैं, जो दुनियाकी

स्वतन्त्र चिन्तन ही दुनियाका उद्धार करेगा।

जब इन लोगोंकी बातोंसे अपच होने लगी, तब मेरी

दृष्टि उसी डिब्बेमें बगलकी बेंचपर बैठे तीन प्राणियोंकी ओर गयी।स्त्री-पुरुष और बालक।ये बेचारे दादर (बम्बईके

एक उपनगर)-में गाडीपर बैठे थे। जौनपुर जिलेके रहनेवाले

भाग ८९

आवरणचित्र-परिचय संख्या ५] विचारधाराओंपर बहस नहीं कर सकते, पर जिनकी मौन विचारकों या प्रचारकोंके यहाँ बन्धक होते हैं; उनमें श्रद्धा और अटल विश्वासके आगे आधुनिकताका दावा स्वार्थपरायणता होती है तथा जीवनका आर्थिक पहलू करनेवालोंके अधूरे तर्क नि:सार और निष्फल हैं। वहाँ प्रधान होता है। ये नागरिक अपनेको माप बनाकर भारतका हृदय मापते हैं—अपनी शिक्षाके दुष्टिकोणसे सम्पूर्ण अभी दिल्लीसे लखनऊ जाते हुए मैंने इसी प्रकारकी श्रद्धांके कई दृश्य देखें हैं और वह पुरानी याद ताजा हो जातीय मानसका विश्लेषण करते हैं और ग्रामीणोंको सुधारनेका गयी है। जब-जब नगरोंसे दुर ग्रामीण प्रदेशोंमें जाने या दम भरते हैं। इससे अधिक आत्मवंचना और क्या होगी? उधरसे गुजरनेका मौका मिलता है, तब-तब मुझे एक जहाँसे हमें सीखना है, वहाँ हम सिखाने जाते हैं। यह जो भारतीय संस्कृति शताब्दियोंकी दुर्लङ्घ्य अनोखा अनुभव होता है। जैसे चारों ओरसे बन्द कमरेके खाइयों और धाराओंको पारकर आज भी जीवित है— अन्दर जब बाहरसे आ रहा आदमी प्रवेश करता है, तभी उसे पता चलता है कि शुद्ध मुक्त वायु और बन्द जहरीली जिसके आगे राजवंशोंके दीपक बुझते गये हैं, क्रान्तियोंकी हवामें क्या अन्तर है; अन्दर बैठे आदमीको, उस विषाक्त विद्युत्-रेखाओंका अभिनय होता रहा है और विप्लव हवामें साँस लेते रहनेका अभ्यास हो जानेके कारण कोई तथा विद्रोहका ताण्डव-नृत्य भी हुआ है, किंतु इन सब असुविधा नहीं अनुभव होती; पर मृत्युका विष प्रतिक्षण अभिनयोंके पश्चात् भी जो एक सन्देशको लिये जी रही धीरे-धीरे उसके अन्दर प्रविष्ट होता रहता है। वैसे ही हम है, उसे जिला रखनेका श्रेय इन्हीं श्रद्धावान् ग्रामीणोंको औद्योगिक नगरोंमें रहनेवाले लोग जब बाहर निकलते हैं, है। संतोंने इनके हृदयको उठाया है और धर्मके मौलिक तभी पता लगता है कि भारतवर्ष क्या है और उसका हृदय सिद्धान्तोंकी इनके जीवनमें व्याख्या हुई है। कहाँ है। हमारे नगरोंपर वैदेशिकताकी छाप है—नागरिकोंके यह श्रद्धा जबतक जीवित है, संस्कृतिका विनाश कैसे हो सकता है ? यह श्रद्धा ही संस्कृतिका कवच है। मस्तिष्क, जिन्हें शिक्षित होनेका गर्व होता है, प्राय: विदेशी -आवरणचित्र-परिचय [देवर्षि नारद] देवर्षि नारद भगवान् विष्णुके मानस अवतार और ब्रह्माजीके मानस पुत्र हैं। ये परब्रह्म परमात्माके मन हैं। ये परम भागवत और भक्तिके आचार्य हैं। अप्रतिहत गतिवाले नित्य परिव्राजक नारदजी समस्त प्राणियोंके कल्याणके लिये सम्पूर्ण लोकोंमें पर्यटन किया करते हैं। 'नार' शब्द जलका पर्याय है, ये सर्वदा जलसे तर्पण करते हैं, इसलिये इनका नारद नाम पड़ा। देवर्षि नारदजी वेदान्त, योग, ज्योतिष, वैद्यक, संगीतशास्त्रादि अनेक विद्याओंके आचार्य हैं और संकीर्तन-भक्तिके तो वे मुख्याचार्य ही हैं। स्वरग्रामसे विभूषित अपनी वीणापर भगवन्नाम और भगवद्गुणोंका गान करते हुए वे त्रिलोकीमें भ्रमण करते रहते हैं। उनका एक ही व्रत है, जो मिल जाय उसे भगवान्के चरणकमलोंमें

पहुँचा देना। ऐसे कृपामूर्ति देवर्षि नारदजीके विषयमें श्रीमद्भागवतमें कहा गया है—

अहो देवर्षिर्धन्योऽयं यत्कीर्तिं शार्ङ्गधन्वनः।

गायन्माद्यन्तिदं तन्त्र्या रमयत्यातुरं जगत्॥ अहा! ये देवर्षि नारद धन्य हैं; क्योंकि ये शार्ङ्गपाणि भगवान्की कीर्तिको अपनी वीणापर गा–गाकर स्वयं

तो आनन्दमग्न होते ही हैं, साथ-साथ इस त्रितापतप्त जगत्को भी आनन्दित करते रहते हैं।

साधकोंके प्रति-(ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीरामसुखदासजी महाराज) प्रश्न-प्रेम कैसे बना रहे? है। जिनके भीतर सत्संगके संस्कार हैं, उनपर सत्संगका उत्तर—प्रेमकी महिमा सबसे अधिक है। प्रेमकी जितनी असर ज्यादा पड़ता है। इसलिये सत्संगके द्वारा अपने महिमा है, उतनी महिमा ज्ञानकी भी नहीं है और भगवानुके भीतर अच्छे संस्कार भरने चाहिये।

साक्षात् दर्शनकी भी नहीं है! यदि आपसमें निष्काम प्रेम

हो जाय तो वह प्रेम भगवत्प्राप्तिमें कारण हो जाता है! आपसमें जो वैर-विरोध होता है, वह प्रारब्धसे

नहीं होता, प्रत्युत अपनी गलतीसे होता है। अपनी गलतीको मिटानेमें हम स्वतन्त्र हैं। अपनी गलती मिटा

दें, अपना अभिमान छोड दें तो प्रेम हो जायगा। वैर रखनेसे बहुत नुकसान होता है। जिस घरमें लडाई होती

है, उस घरकी कन्या कोई लेना नहीं चाहता कि हमारे घरमें चिनगारी आ जायगी तो आग लग जायगी! आपसमें खटपट होनेसे कुएँका पानीतक सूख जाता है! आपसमें प्रेम होनेसे धन-सम्पत्ति भी बढ़ जाती है-

जहाँ सुमित तहँ संपित नाना। जहाँ कुमित तहँ बिपित निदाना॥ (रा०च०मा० ५।४०।६) जिस घरमें प्रेम होता है, उस घरकी रोटी साधु भी लेना चाहते हैं, जिससे अन्त:करण शुद्ध हो। आपसमें स्नेह होता है—नम्रतासे, सरलतासे, सीधेपनसे, द्वेष न

रखनेसे, ईर्ष्या न रखनेसे। अपने-अपने घरोंमें, गाँवोंमें एक-दूसरेकी सेवा करो, सुख पहुँचाओ। दूसरोंको सुख पहुँचानेकी अपनी

आदत बना लो। जो गरीब घर हैं, जहाँ अन्न-वस्त्रकी तंगी है, उन घरोंमें छिपकर अन्न-वस्त्र पहुँचाओ, गरीब बालकोंको पढ़ाओ, उनकी सहायता करो तो आपका पैसा

सफल हो जायगा। इसका बड़ा भारी पुण्य होगा। यह

निश्चित बात है कि जिस दिन मरोगे, पैसा छोड़कर ही मरोगे। आजतक ऐसा कभी नहीं हुआ कि पैसा सब खर्च हो गया, पीछे आदमी मरा। विरक्त, त्यागी सन्त-महात्माकी भी तूँबी, लँगोटी पीछे रहती है, मरता है पहले!

सजातीयतामें खिंचाव होता है। अत: जिनके भीतर

कुसंगद्धे पांस्कारि हि, cord र इस्पन्क https://dac. ag/dharma प्रश्निक धर्मकी मानते हि, सुर्व ह Ayinash/Shi

आदिमें, पश्-पक्षियोंमें, सब प्राणियोंमें प्रेम होगा ही। प्रश्न-बाहरकी पवित्रतासे क्या लाभ ? मन पवित्र होना चाहिये। मन पवित्र है तो बाहरकी पवित्रताकी क्या

जिसका भगवान्में प्रेम है, उसका माता-पिता

जरूरत? उत्तर—मन अपवित्र, खराब होता है, तभी यह बात पैदा होती है कि बाहरकी पवित्रतासे क्या लाभ ? अगर मन पवित्र हो तो शास्त्रसे विरुद्ध काम हो ही नहीं सकता,

तो यह मनकी अपवित्रताका प्रमाण है। मन पवित्र होगा तो शास्त्र-विरुद्ध बात पैदा हो ही नहीं सकती, प्रत्युत बिना शास्त्र पढ़े मनमें शास्त्रके अनुकूल बात पैदा होगी। राजा दुष्यन्तने जब कण्व ऋषिके आश्रममें शकुन्तलाको देखा तो उनके मनमें विचार आया कि यह किसी क्षत्रियकी बेटी है, ब्राह्मणकी बेटी नहीं है। अगर यह ब्राह्मणकी बेटी होती

तो मेरा मन उसमें खिंचता ही नहीं-

असम्भव बात है। अगर शास्त्रसे विरुद्ध बात पैदा होती है

सतां हि सन्देहपदेषु वस्तुषु प्रमाणमन्तःकरणप्रवृत्तयः॥ (अभिज्ञानशाकुन्तल १। २१) 'इसमें सन्देह नहीं कि यह क्षत्रियद्वारा ग्रहण करनेयोग्य है, जिससे मेरा विशुद्ध मन भी इसको चाहता है; क्योंकि जहाँ सन्देह हो, वहाँ सत्पुरुषोंके अन्त:करणकी

असंशयं क्षत्रपरिग्रहक्षमा यदार्यमस्यामभिलाषि मे मनः।

प्रवृत्ति ही प्रमाण होती है।' सीताजीको देखनेपर रामजी भी कहते हैं-रघुबंसिन्ह कर सहज सुभाऊ। मनु कुपंथ पगु धरइ न काऊ॥

मोहि अतिसय प्रतीति मन केरी। जेहिं सपनेहुँ परनारि न हेरी॥ (रा०च०मा० १।२३१।५-६)

संख्या ५] साधकोंके प्रति— करते हैं, फिर एक चोटी न रखें तो क्या हानि है? तो क्या मृत्यु भगवान् नहीं हैं ? भगवान्के भक्त मौतको उत्तर-घड़ीमें अनेक पुर्जे होते हैं। उनमेंसे एक भी भगवान्का स्वरूप समझते हैं। सब कुछ भगवान् ही छोटा-सा पूर्जा भी निकाल दो तो घडी चलेगी नहीं। आप हैं, केवल राग-द्वेषके कारण ही संसार दीख रहा है। कोई भी काम करो, उसमें छोटी-सी भी कमी रह जायगी प्रश्न-मूक सत्संग क्या है? तो वह कमी ही रहेगी, इसमें सन्देह नहीं है। घड़ीमें छोटे-उत्तर—न शरीरकी क्रिया हो, न वाणीकी क्रिया हो, से-छोटा पुर्जा भी अपनी जगह पूरा है। उसकी कीमत न मनकी क्रिया हो, सब मुक (चुप) हो जायँ। कोई भी बड़े पुर्जेसे कम नहीं है। इसी तरह चोटी भी अपनी जगह क्रिया न करके एक भगवान्के चरणोंके शरण हो जाय। पूरी है। अपनी-अपनी जगह सब पूरे हैं। क्या घडीके शरण होना है—यह भाव भी न रहे। यह 'चूप साधन' है। छोटे पुर्जेकी जगह बडा पुर्जा काम कर सकता है? छोटी-सी कमी भी कमी ही रहेगी, उसकी पूर्ति जैसे आपकी कन्याका विवाह हो जाता है तो वह नहीं हो सकती। महाराज नलके शरीरमें प्रवेश करनेके ससुरालकी हो जाती है, उसका गोत्र बदल जाता है, ऐसे लिये कलियुग कई दिनोंतक प्रतीक्षा करता रहा। एक ही जो सर्वथा भगवान्के शरण हो जाता है, उसका सब दिन लघुशंका करके नलने हाथ तो धो लिये, पर पैर कुछ बदल जाता है। वह संसारी आदमी नहीं रहता। नहीं धोये तो कलियुग उनमें प्रवेश कर गया! छोटी-वह संसारसे ऊँचा उठ जाता है। उसकी वाणी विलक्षण सी कमी भी बड़ी भारी कमी है। अत: चोटी न रखना हो जाती है। उसका जीवन विलक्षण हो जाता है। एक बडी भारी कमी है! भगवान्के शरण होते ही उसका और भगवान्का एक अगर सच्चे हृदयसे अपना कल्याण चाहते हो तो रूप हो जाता है। इसलिये 'हे नाथ! मैं आपका हूँ'— अपनी बुद्धिमानी मत लगाओ, शास्त्रकी बात मानो। इस प्रकार शरण होकर निश्चिन्त हो जाय। इसमें किसी गीता कह रही है—'**तस्माच्छास्त्रं प्रमाणं ते** गवाहकी जरूरत नहीं है। 'हे नाथ! मैं आपका हूँ'— कार्याकार्यव्यवस्थितौ' (१६। २४) अर्थात् कर्तव्य इतना कह देनेमात्रका बड़ा माहात्म्य है, अगर भीतरसे और अकर्तव्यके विषयमें शास्त्र ही प्रमाण है। हो जाय तो पूर्ण हो जायगा! 'हे मेरे नाथ! मैं आपको भूलूँ नहीं'—यह प्रार्थना प्रश्न-एक भाई कैन्सर-रोगके कारण बडा कष्ट हरेक भाई-बहनके लिये बड़े कामकी है। आप हरदम पा रहा है। ऐसी अवस्थामें उसका कल्याण हो, इसके यह प्रार्थना करके देखो तो सही, विचित्रता आ जायगी! लिये क्या करना चाहिये? बीचमें अपनी बुद्धि मत लगाओ। भगवान्को भूलें नहीं, उत्तर—वह सब घरवालोंका हृदयसे त्याग करके, फिर सब काम ठीक हो जायगा। स्वयं पहलेसे ही साध्-संन्यासीकी तरह होकर एक भगवानुके शरण हो परमात्माका अंश है और वह उसीके शरण हो जाय तो जाय। 'मैं केवल भगवानुका हूँ और केवल भगवान् मेरे फिर बाकी क्या रहेगा? हैं; मैं और किसीका नहीं हूँ और मेरा कोई नहीं है'— इस भावसे रात-दिन भगवानुके भजनमें लग जाय तो प्रत्येक काममें दो बातें खास हैं - अपने स्वार्थका कल्याण हो जायगा। भगवान्के चरणोंके शरण होनेसे त्याग और दूसरेका हित। कोई भी काम इस भावसे सब काम ठीक हो जाता है। मत करो कि इससे मेरेको क्या फायदा होगा, प्रत्युत इस भावसे करो कि इससे दूसरेको क्या फायदा होगा। जो मृत्युसे डरे नहीं, प्रत्युत मृत्युको साक्षात् भगवान्का स्वरूप समझे कि मृत्युरूपसे साक्षात् स्वयं भगवान् अपना मतलब सिद्ध करनेमें लगे हैं, वे अपना कल्याण आयेंगे। 'वास्देव: सर्वम्'—सब कुछ भगवान् ही हैं नहीं कर सकते।

िभाग ८९

अभिशाप नहीं है प्रतिकूलता (श्रीताराचन्दजी आहूजा)

दु:ख-सुख, अनुकूलता-प्रतिकूलता, सुविधा-संघर्षका इनसान जाग जाता है। पुरुषार्थीके लिये प्रतिकूलता, नाम ही जीवन है। दु:ख और सुख सामान्यत: पाप और विषमता एवं कठिनाइयाँ वरदानस्वरूप सिद्ध होती हैं।

पुण्यके परिणाम माने जाते हैं। शास्त्र कहते हैं कि जब मनुष्यके अनन्तानन्त जन्मोंके पुण्यसमूहोंका उदय होता है तो उसके पास अनेक प्रकारके साधन तथा सुविधाओंका अम्बार लग जाता है। सभी अपने प्राणोंसे भी बढ़कर प्रिय परिजन-जैसे लगने लगते हैं। सुखोंके अनेक साधन स्वत: ही जुटने लग जाते हैं। इन्द्रियोंको तुप्त करनेवाली सामग्रियाँ, देहको सुख प्रदान करनेवाली वस्तुएँ, मनको

लुभानेवाले संसाधन, मान-सम्मान, पद-प्रतिष्ठा आदि सभी मनुष्यकी झोलीमें अनायास गिरने लगता है। संसार बड़ा ही मनोरम और सुखदायी लगने लगता है। इसकी सतरंगी आभा जीवनको सुवाससे भर देती है। ऐसेमें संसारको दु:खालय कहनेवाले लोगोंकी बातें बड़ी विचित्र, अप्रिय एवं अनुचित लगने लगती हैं। जब सुख आता है तो जीवनमें भोग-विलास भी

बढ़ जाता है। भोगविलासी मनुष्य तन-मनसे भोग एवं वासनाओंमें निरत तथा मस्त हो जाता है। राजासे संन्यासी बने भर्तृहरि महाराज तो यहाँतक कहते हैं कि तब जीवन भोगके योग्य ही नहीं रह जाता, अपितु भोग ही जीवनको भोग-भोगकर खोखला कर देता है और अन्तमें उसे विनाशके दावानलमें झोंक देता है। भोगी

व्यक्तिको यह ध्यान ही नहीं रहता कि वह अपने सुखोंको होशमें भोग रहा है अथवा बेहोशीमें। सन्त-मनीषी कहते हैं—'तेन त्यक्तेन भूञ्जीथाः' अर्थात् भोग भी त्यागके साथ, सुख भी होशके साथ भोगा जाय

तो वह योग बन जाता है। बेहोश एवं बदहवास मनुष्य दु:खको अपना सबसे बड़ा शत्रु मानता है; क्योंकि वह किंकर्तव्यविमूढ़ होकर

उससे जूझनेके बदले आँसू गिराता है। तब दु:ख

जीवनको ऐसे झकझोर देता है, जिससे सोया हुआ

भगवान् रामका चौदह वर्षका वनवास कोई अभिशाप नहीं था। उन्होंने कठिनाइयोंसे भरे वर्षींमें वह सब कुछ

सीखा, समझा और पाया, जिसे वे सामान्यकालमें शायद ही पा सकते। रामने माता सीताका हरण होनेके बावजूद असीम धैर्य और सहनशीलतासे विपरीत परिस्थितियोंका सामना किया। यही विषमता उनकी प्रेरणास्त्रोत बनी और

उन्होंने रीछ-वानरों-जैसे दुर्बल और कमजोर समझे जानेवाले प्राणियोंको इकट्ठा करके महाबली और साधन-सम्पन्न

योद्धा रावणसे युद्ध किया और विजयश्री प्राप्त की। यदि हम महाभारतपर दृष्टि डालें तो हमें अर्जुन

और दुर्योधनके जीवनमें भी इतिहास अपने आपको दोहराता हुआ दृष्टिगोचर होता है। भोग-विलासमें पूरी तरहसे चूर दुर्योधनने केवल पुण्यका फल भोगा, परंतु

बारह वर्षके वनवास और एक वर्षके कठोर अज्ञातवासकी अवधिमें अर्जुन विषमताओंसे लड़ा-जूझा पाशुपतास्त्रसहित अनेकानेक दिव्यास्त्रोंको प्राप्त करनेमें

सफल हुआ। यदि अर्जुनके समक्ष प्रतिपल प्रतिकूलताओं और कठिनाइयोंकी भयावहता नहीं होती तो वह भी इन

संख्या ५] अभिशाप नहीं	है प्रतिकूलता २१
**********************************	**************************************
दिव्य अनुदानों-वरदानोंसे वंचित ही रहता। प्रतिकूलता	पूरे विश्वको झकझोर कर रख दिया और वह सब कुछ
अर्जुनकी चुनौती बनी। उसने इस चुनौतीको स्वीकार	कर दिखाया, जिसे करनेके लिये समूची धरतीके साधन
किया एवं अदम्य संयम तथा साहसके साथ सामना	भी कम पड़ते थे।
करते हुए विजयश्रीका वरण किया।	साधन एवं सुविधाओंसे कोसों दूर क्रान्तिकारी
अब्राहम लिंकन बड़े अभावों और कठिनाइयोंके	चन्द्रशेखर आजाद, भगतसिंह और सुभाषचन्द्र बोसने
बीच पलकर बड़े हुए थे। कहते हैं कि स्ट्रीट लाइटके	युद्ध-तकनीकोंकी विशेषज्ञ एवं साधन-सम्पन्न अँगरेजी
नीचे बैठकर उन्होंने पढ़ाई पूरी की थी। लेकिन अपने	सरकारको ऐसी पटखनी दी, जिसे वे कभी भूल नहीं
अथक परिश्रम, प्रबल इच्छाशक्ति और अदम्य साहसके	सकते। वस्तुत: प्रतिकूलता, विषमता एवं चुनौतियाँ हमें
बलपर वे अमेरिकाके राष्ट्रपतिपदतक पहुँच गये थे।	सशक्त बनाती हैं, परंतु हम इन्हें किस रूपमें लेते हैं, यही
सूरदास जन्मसे अन्धे और निर्धन परिवारसे सम्बन्ध रखते	महत्त्वपूर्ण है। यदि कठिन घड़ीमें हम रोते-बिलखते रहें
थे। भूखसे लड़ते हुए वे श्रीकृष्णकी भक्तिके रसमें ऐसे	तो जीवन अभिशप्त लगने लगेगा और इससे पलायन
डूबे कि भगवान् प्रकट हो गये। उनकी काव्य-रचना	करनेका मन करेगा, भले ही इससे भागना सम्भव हो
अद्भुत है। आज भी उनके भजनोंको गुनगुनाकर भक्तजन	अथवा नहीं। इसके विपरीत यदि प्रतिकूलताको हम एक
झूम उठते हैं। स्वामी शरणानन्दजी भी अन्धे थे और	चुनौती की तरह स्वीकार कर लें तो हमारे भीतर निश्चित
निर्धन भी, परंतु उन्होंने अपने पुरुषार्थके द्वारा ज्ञानका	ही संघर्षसे जूझनेकी इच्छाशक्ति पैदा होगी, हमारा
ऐसा आलोक फैलाया कि उनकी गिनती आज महाज्ञानियों	आत्मविश्वास बढ़ेगा और जीवनके हर पलको हम
और भक्त-शिरोमणियोंमें की जाती है। आध्यात्मिक	खेलकी तरह समझने लगेंगे। तब कठिनाइयाँ हमारा
क्षेत्रमें परचम लहरानेवाले अधिकांश सन्तोंका जीवन	सम्बल बनेगी और चुनौती सफलताका सबसे बड़ा
कठिनाइयों और अभावोंमें ही बीता था।	आधार और अवसर सिद्ध होगी।
नियमित अभ्यास, अथक परिश्रम, चुनौतीको स्वीकार	महापुरुषोंका कथन है कि प्रतिकूलताएँ अभिशाप
करनेकी प्रबल इच्छाशक्ति एवं भगवत्कृपाका आश्रय	नहीं, अपितु वरदान होती हैं। कठिनाइयाँ हमें समर्थ
लेकर व्यक्ति एकके बाद एक सफलता अर्जितकर अपने	बनाती हैं और चुनौतियाँ लक्ष्यके प्रति सजग और सचेष्ट
लक्ष्यतक पहुँचनेमें सफल हो जाता है। आदमी जैसा	करती हैं। विषमता एवं प्रतिकूलतामें तन और मनकी सारी
सोचता है, वह वैसा ही बन जाता है। इसलिये वैसा	ऊर्जा एकत्रित होकर उससे निकलनेके लिये तत्पर हो
सोचो जैसा बनना है। हर काली रातके बाद सुहानी	उठती हैं। प्रतिकूलता अभिशाप तो उनके लिये होती है,
सुबह आती है, अतः सदैव उजालेकी ओर देखो। यदि	जो दु:खमें दु:खके कारणोंको दूसरोंमें आरोपित करते हैं।
विचार ऊँचा हो और संकल्पशक्ति दृढ़ हो तो सफलता	आध्यात्मिक दृष्टिसे विचार किया जाय तो मनुष्य दु:खमें
हमारे पीछे दौड़ी चली आयेगी।	भगवान्के अधिक समीप होता है। सुखमें तो वह भगवान्को
भारतीय संस्कृतिको विश्व-संस्कृतिके रूपमें प्रतिष्ठित	भूल ही जाता है। जीवनभर दु:ख भोगनेके बाद भी
करनेवाले युगनायक स्वामी विवेकानन्दके बचपनको	कुन्तीने श्रीकृष्णसे दु:ख ही माँगा था; क्योंकि वह जानती
छोड़ दिया जाय तो उनका समूचा जीवन भीषण	थी कि जब-जब भी उसपर विपत्तिका पहाड़ गिरा, तब-
विषमताके दावानलमें गुजरा। पिताजीके देहावसानके	तब उसने श्रीकृष्णको अपने पास खड़ा देखा और दु:खोंसे
बाद युवा नरेन्द्रके सामने पूरे परिवारके भरण-पोषणकी	मुक्ति पायी। इसलिये महापुरुषोंने कहा भी है—
जिम्मेदारी आ खड़ी हुई। तमाम विसंगतियोंका वरण	सुख के माथे सिल परे, जो नाम हृदय से जाए।
करते हुए साधनहीन होनेके बावजूद स्वामी विवेकानन्दने	बलिहारी वा दुःख की, जो पल पल नाम रटाए॥
	- •

बोधकथा-कोखकी कीमत (श्रीशंकरलालजी माहेश्वरी) आषाढ़ अमावस्याकी बरसाती बयार जब भयावही मॉॅंगी जा रही थीं। देवदत्त बचपनसे ही प्रतिभाशाली निशामें जगत्-शिशुको सुला देती है तब तमसाच्छन्न लगने लगा। 'होनहार बिरवान के होत चीकने पात' नीरव गगनके नीचे तटिनीके तटपर भारतकी नारियाँ बच्चा बड़ा हुआ। उसे पढ़ाया-लिखाया, माँ शारदाकी डॉक्टर बनानेकी बलवती इच्छा थी, वह भी पूरी हो अपने श्रद्धा-दीपकोंको आँचलमें छिपाये पहुँचती हैं और एक-एक दीपको धीमी लहरोंपर धीरे-धीरे प्रवाहितकर गयी। अपनी डॉक्टरीकी पढ़ाई कर ही रहा था कि उसकी प्रतिभासे प्रभावित होकर लोगोंका देश-विदेशसे वर माँगती हैं कि हे अदृश्य देव! मेरी कोखसे ऐसे नक्षत्रको जन्म देना, जो हर नर-नारीका हृदयहार बन बुलावा आना प्रारम्भ हो गया। वह पढ़ाई पूरीकर घर लौटा ही था कि अमेरिकासे भारतीय मूलके एक

सके। शारदाकी भी चिरसंचित कामना तब फलित हुई, जब उसने ४५ वर्षकी आयुमें एक पुत्ररत्नको जन्म दिया। इसका नाम देवदत्त रखा गया। देवदत्त अपने पिता सोमदत्तकी अकेली संतान है। उसके पैदा होनेसे पहले ही पिताकी सड़क-दुर्घटनामें मौत हो गयी थी। वे बड़े धार्मिक और दयालु प्रवृत्तिके व्यक्ति थे। सेवा-भावना उनमें कूट-कूटकर भरी हुई थी। वह अपनी खेतीकी कमाईका अधिक हिस्सा असहाय और गरीब लोगोंको दान-दक्षिणामें ही खर्च कर देता था। पूरा गाँव उनके सेवा कार्योंको आज भी याद करके कहते हैं 'ऐसा नेक इंसान अब कभी नहीं आयेगा, वह

इंसान नहीं देवता ही था।' देवदत्तकी माँ शारदाकी तो दुनियाँ ही उजड गयी फिर भी देवदत्तका यथोचित लालन-पालनकर उसके भविष्यको उज्ज्वल बनानेकी साधके संकल्पके साथ जीवन जी रही थी वह। बालकके भावी जीवनकी मधुर कल्पना लिये कभी-कभी भाव-विभोर हो जाती। आज देवदत्तका प्रथम जन्मोत्सव था। घरमें उत्सवका आलम था। पूरा घर-आँगन किलकारियोंसे गूँज रहा

था। शारदाका मन-मयुर नाचने लगा। पास-पडोस,

गली-मोहल्लेसे बधाइयाँ आने लगीं। सभीने भगवानुका

अनुग्रह स्वीकारकर देवदत्तके लिये सुखी, सम्पन्न और

शारदाकी छायातले देवदत्तका प्यार-दुलारके साथ

सेवाभावी बननेके लिये मंगलकामनाएँ प्रकट कीं।

ख्यातिप्राप्त डॉक्टरका आमन्त्रण मिला। अच्छी खासी पगार, रहने-खानेकी सारी सुविधाएँ और आने-जानेका

Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Sha

पूरा प्रबन्ध। समस्त आधुनिक सुविधाओंकी प्राप्तिसे आकर्षित हो देवदत्तने अमेरिका जानेका निश्चय कर लिया। निश्चित अवधिमें वहाँ पहुँचकर पूर्ण समर्पणभावसे कार्यारम्भ कर दिया। वहाँ जाने-माने डॉक्टरोंके साथ कार्य करनेका अवसर पाकर वह अपने व्यवसायमें दिन दूनी-रात चौगुनी प्रगति करने लगा और एक दिन वह अमेरिकाका ख्यातिप्राप्त डॉक्टर बन गया। देवदत्तकी बढ़ती लोकप्रियतासे प्रभावित होकर उसी डॉक्टरने अपनी बेटी रंजनाकी शादी देवदत्तके साथ

[भाग ८९

और वह वहाँसे अहमदाबाद आ गया। उसने अहमदाबादमें ही अपना निजी चिकित्सालय खोल दिया और समीप ही एक बँगला बनवाकर रंजनाके साथ रहने लगा। चिकित्साकार्य शुरू किया। हाथमें यश तो था ही। उसे असाध्यसे असाध्य रोगोंके उपचारमें सहज सफलता मिलती रही, अस्पतालकी ख्याति आसमानको छूने

लगी। रात-दिन चिकित्सकीय कार्यमें उलझा रहता।

कर दी। शादीमें उसे अपार धनराशि तथा समस्त

आधुनिक सुख-सामग्री भी प्राप्त हुई। अभी पाँच वर्ष

भी पूरे नहीं हुए थे कि देवदत्तकी अपनी ही धरतीपर

कार्य करनेकी इच्छा शक्तिने उसे अपने देश भारतमें रहकर भारतीयोंकी सेवामें कार्य करनेको प्रेरित किया

संख्या ५] कोखकी	कीमत २३
**************************************	**************************************
रंजनाका व्यवहार बहुत ही रूखा था। वह	धर्मशाला बनायी जाय, जहाँ गरीब रोगियोंको आवासकी
चिड़चिड़े स्वभावकी थी। अपने भी उसे पराये लगते थे।	नि:शुल्क सुविधा मिल सके। वह दिनोंदिन कमजोर
देवदत्त उससे बड़ा दुखी था। रंजना पूर्णतः पाश्चात्य	होती जा रही थी। लोगोंने कहा अपने डॉक्टर बेटेके पास
संस्कारोंसे पोषित थी, भारतीय संस्कारोंसे तो उसका	क्यों नहीं चली जाती? वह जाना-माना ख्यातिप्राप्त
दूरका रिश्ता भी नहीं था। पूरा समय क्लबों, पार्टियों,	डॉक्टर है, उसके द्वारा लम्बी और असाध्य बीमारीसे
नाच-गानों और सैर-सपाटोंमें ही बीतता था। देर रातमें	ग्रसित रोगी भी चुटकियोंमें ठीक हो जाते हैं। आखिर
लौटना उसका स्वभाव–सा बन गया। परिजनोंसे तो पूरी	वह तुम्हारा बेटा ही तो है। वहाँ खाने-पीने, रहने-
पहचान भी नहीं हो पायी। उसके लिये अपने भी पराये	ठहरने, दवा-दारू—सारी सुविधाएँ तुम्हें मिलेंगी। यहाँ सड़ते
ही थे। आये दिन लड़ाई-झगड़ोंसे देवदत्त खिन्न रहने	रहनेसे तो वहाँ जाकर इलाज कराना ज्यादा अच्छा है।
लगा; रंजनाका सासू माँसे तो कोई लगाव था ही नहीं।	शारदाने अपने बेटेके पास अहमदाबाद जानेका मन
माँ शारदाको जब देवदत्तके अहमदाबादमें कार्य	बना लिया। वहाँ चली भी गयी। उसे अपने बँगलेके
प्रारम्भ करनेकी जानकारी मिली तो उसे आश्चर्यमिश्रित	बाहरी दालानमें बनी एक छोटी-सी कोठरीमें ठहरा
प्रसन्नता हुई। देवदत्त भी पाश्चात्य प्रभावसे मुक्त नहीं	दिया। इस बातपर तो पति-पत्नीमें झगड़ा हुआ और
रह सका। शारदा सोचती थी कभी बहू घर आयेगी तो	लम्बे समयतक बोल-चाल भी बन्द रही तथा अनबन
मेरे बुढ़ापेका सहारा बनेगी। दु:ख-दर्दमें सेवा करेगी।	बढ़ती गयी। देवदत्त माँको भीतरके कमरोंमें रखना
वह कभी-कभी सोचती यदि ऐसा नहीं हुआ तो …	चाहता था, पर जिद्दी रंजनाके सामने देवदत्तकी एक न
कभी वह विचलित होकर अज्ञात भयसे भी दुखी हो	चली। रंजनाके रूखे व्यवहारके कारण ही देवदत्तने
जाती थी। आज देवदत्त अकेला ही माँसे मिलने घर	माँकी सेवामें एक दक्ष नर्सको सेवाकार्यके लिये नियुक्त
आया और एक घण्टा भी नहीं ठहरा होगा, अहमदाबाद	कर दिया था। उपचार प्रारम्भ हो गया, दवा कामयाब
लौट गया। जब बहूको साथ नहीं लानेकी बात हुई तो	रही और चार महीने वहाँ ठहर रोगमुक्त होकर वह गाँव
सुनकर शारदा स्तब्ध रह गयी। वह गाँवोंकी जिन्दगी	लौट आयी। उसकी सेवामें कार्यरत नर्स आज भी उससे
जीना किसी भी हालतमें पसन्द नहीं करती। वह यहाँ	मिलने आती है तो उसका मन बाग-बाग हो जाता है।
कभी नहीं आयेगी। माँ! उसका रहन-सहन चाल-ढाल	आज मकर–संक्रान्तिका दिन था, ब्राह्मणोंका निमन्त्रण
हम लोगोंके अनुकूल भी नहीं है।	था, चौराहोंपर गायोंको घास डाला गया था। भीख
समयका पहिया घूमता रहा। दिन, महीने, साल	माँगनेवालोंकी संख्या भी कम नहीं थी। सभीको शारदाने
बीत गये। शारदा बूढ़ी हो गयी, कमर झुक गयी, लाठी	मुक्त हस्तसे दान-दक्षिणा दी। शामके लगभग ५ बजे
उसका सहारा बन गयी। कई बीमारियोंने एक साथ	होंगे, डाकिया आता दिखायी दिया। वह पहले कभी
उसपर आक्रमण कर दिया। घरमें कोई दूसरा था नहीं।	नहीं आया था। उसे देख, शारदाका मन-मयूर नाच
अकेली खटियापर पड़े-पड़े अपने पिछले दिनोंकी यादमें	उठा। आज मेरे बेटेकी चिट्ठी आयी होगी। बन्द
खो जाती। गम्भीर और असाध्य बीमारी उसका पीछा	लिफाफा देकर डाकिया चला गया। बड़ी उत्सुकतासे
नहीं छोड़ रही थी। खेती-बाड़ी दूसरोंके भरोसेपर होती	शारदाने लिफाफा खोला। तो उसमें बहू रंजनाका पत्र
थी। अच्छी कमाई थी खेतीसे, उस कमाईका थोड़ा	था, जिसमें लिखा था—
हिस्सा दान-दक्षिणामें चला जाता था तथा कुछ जरूरत-	आदरणीया माताजी,
मन्दोंको उधार दे देती। उसकी इच्छा थी कि कहीं ऐसी	सादर प्रणाम। आपके चले जानेके बाद घर सूना-

भाग ८९ सा हो गया। आपके रहते थोड़ी चहल-पहल तो थी। बहू रंजना, बातचीतसे मन लगा रहता था। अब तो यहाँ कोई तुम्हारा पत्र मिला। पढ़कर आश्चर्य इसीलिये नहीं बतियानेवाला भी नहीं है। हुआ कि वास्तवमें शहरी जीवनके खर्चको मैं अच्छी आपको एक बात कहना चाहती हूँ। आप बुरा तरह जानती हूँ। मैंने जिस कोठरीको चार माहके लिये मत मानना। जिस कमरेमें आप ठहरी थी, उसे अब शरण-स्थली बनाया था, उसके दस हजार रुपये ढाई हजार रुपये प्रति माहसे किरायेपर दे दिया है। किरायेके अवश्य मिल जाते। तुम चिन्ता मत करो, शीघ्र आप जानती हैं कि शहरी जीवन जीनेमें खर्च तो ही इस नुकसानकी भरपाई हो जायगी। अधिक होता ही है। जिस कमरेमें आप चार महीना मेरी भी एक बात ध्यानसे सुनना। उस समय तुम्हारा ठहरी थीं, यदि वह खाली होता तो दस हजार रुपया जन्म भी नहीं हुआ रहा होगा। २६ वर्ष पूर्वकी बात है, मिल जाता। उससे साग-सब्जी, दुध-घी, बिजली-तुम्हारे पति देवदत्तके लिये मैंने एक वातानुकूलित भव्य पानीका खर्च ही निकलता। आपके उपचारमें तो जो आवास गृहकी व्यवस्था की थी। जहाँ समस्त प्रकारकी सुविधाएँ उपलब्ध करायी गयीं। सन्तुलित भोजन, पोषक दवाइयाँ काममें आती थीं। वे तो डॉक्टर साहबको सेम्पलमें ही प्राप्त हुई थीं। दवाइयाँ बराबर लेते रहना पेय पदार्थ, शुद्ध आबो हवा, रोगोपचारकी सारी व्यवस्थाएँ, अपने स्वास्थ्यका पूरा ध्यान रखना। आँधी-तूफान, सर्दी-गर्मी, वर्षा-धूपसे सुरक्षित रखनेहेत् आवश्यक प्रबन्ध, निरोगी जीवनके लिये कभी-कभी डॉक्टरी —आपकी बहु रंजना पत्र पढ़कर शारदाको तो काटो तो खून नहीं। उसे जाँच एवं परामर्श भी लेती रही, इसकी सेवामें रहते में उन दिनोंकी यादें हृदय पटलपर धरना देने लगी जब कभी बीमार भी हो जाती, हाथ-पैर टूटने लगते, कमर-देवदत्त डॉक्टरीकी पढ़ाई करता था। परीक्षाके दिनोंमें दर्द बढ़ जाता, जी मचलाने लगता, दाना-पानी छूट जाता, रात-रात भर जग कर उसकी सार-सँभाल रखती। सब कुछ सहते हुए भी देवको किसी प्रकारका कष्ट नहीं देरतक पढ़ते रहनेके लिये बीच-बीचमें चाय बनाकर हो, इसका सदैव ध्यान रखा। स्वर्गका-सा सुख दिया है पिलाती। नींद न आये, इसके लिये बीच-बीचमें बातें मैंने उसे। यह व्यवस्था ९ माहतक निरन्तर बनाये रखी और इसके जन्म लेनेके बादकी व्यवस्थाएँ तो अलग ही हैं। करती और कहती 'बेटा! परीक्षामें सफलताके लिये जबतक आत्मविश्वासरूपी सेनापित आगे नहीं बढ़ता क्या कभी मैंने इस प्रकारकी आवासीय व्यवस्थाका तबतक सब शक्तियाँ चुपचाप खडी मुँह ताकती रहती आकलन कर किराया निर्धारित करनेका मन बनाया था? हैं। सफल लोगोंको असफल लोगोंसे अलग करनेवाली नहीं - कभी नहीं; क्योंकि मैं एक माँ हूँ न! और इकलौती चीज यह है कि वे बहुत कड़ी मेहनत करनेके कोखकी कीमत कभी नहीं हुआ करती। पत्रके साथ इच्छुक हैं' बेटा! सदा ध्यान रखो दुनियाँमें वे जीत जाते हस्ताक्षरित खाली चेक भेज रही हूँ, देवदत्तसे कहकर हैं जिन्हें ये विश्वास होता है कि वे जीत सकते हैं। ये अस्पतालके किसी कोनेमें रोगी आवासहेत् सुविधाजनक कमरे बनवा देना ताकि किन्हीं असाध्य रोगोंसे पीडित सारी बातें स्वप्नवत् हो गयीं। आज देवदत्तकी माँ नैराश्यनदमें गोते लगा रही देवदत्तोंकी माँको किरायेका मकान न लेना पडे और थी। उसका मन टूट रहा था। बहुको आखिर हो क्या सारी सुविधाएँ नि:शुल्क प्राप्त हो सके और हाँ उसी गया है ? क्या बुढ़ापेमें सभीके साथ ऐसा ही होता है ? चेकसे अपने चार माहका किराया राशि भी प्राप्त कर नहीं ... नहीं यह तो आयातित संस्कारोंका दुष्प्रभाव ही लेना और उस भवनपर लिखा देना—'सेवा-सदन।' है। शारदाने प्रत्युत्तर देना उचित समझा और लिखा— देवदत्तको ढेर सारा आशीर्वाद।—अभागी शारदा

रामकथामें मुसलिम साहित्यकारोंका योगदान संख्या ५] रामकथामें मुसलिम साहित्यकारोंका योगदान (श्रीबद्रीनारायणजी तिवारी) रायबरेलीके मुसलिम भक्त कविवर श्रीअब्दुल रूप ये भी दिखायी दिया राम का। रशीद खाँ 'रशीद' ऐसे कवियोंमें हैं, जिन्होंने आश् चाहे सागर हो, रावण हो या काल हो, कविताके अलावा रामकी खोज-खबर उपासनाके स्वरोंमें 'कम्बरी' किसने क्या कर लिया राम का॥ ली है। श्रीरामके चरणोंमें रशीदजीकी उन पंक्तियोंको अयोध्या-फैजाबादके कवि इस्लाम खाँ सालिककी लिख रहे हैं, जो हमारी कृति—'रामकथा और मुसलिम रचनाका शीर्षक 'बिछड़ गये हैं राम!' की प्रस्तुत साहित्यकार' में उन्हींकी हस्तलिपिमें श्रीरामके चरणोंमें पंक्तियाँ रामके बनवास जानेकी आज्ञा दशरथके सुनानेके निवेदित हैं-बादके दृश्यको प्रस्तुत करती हैं-बड़े खुशामद प्रिय भये तुम्हहूँ हे अवधेश! बनारस ले सिसकारी, सुबहे गिस्चो विभीषण चरण पै ताहि कियो लंकेश। रोये अवध की शाम-बिछड़ गये हैं राम। तुमहूँ दुष्टन ते दबत गुप्त नहीं यह बात ने जब वनवास सुनाया, झार्त्यो पोंड्यो पगन कहँ जब भृगु मारी लात॥ समझाया। कैसे मन अपना दूसरे वयोवृद्ध बस्ती जनपद (उ०प्र०)-के कवि रानी की मनमानी एक 'वास' ने रामकथाके अचर्चित पात्र दशरथकी रानियोंमें जग में मचा कोहराम-बिछड़ गये हैं राम॥ महारानी 'सुमित्रा' का गुणगान किया। कविवर श्रीअब्बास सूनी गलियां सारी, सूनी अली 'वास' की पैनी दृष्टिमें कौसल्या और कैकेयीकी बगीचा बन फुलवारी। बाग तुलनामें सुमित्राकी ओर अधिक ध्यान जानेका कारण है सगरी अयोध्या नगरी, सुनी 'वास' जीके शब्दोंमें शायद यह है— सूने हैं चारों धाम-बिछड़ गये हैं राम॥ प्रख्यात राष्ट्रीय शायर पद्मश्री बेकल उत्साहीकी एक पूत राम बनवासी का उपासी बना इन पंक्तियोंमें कितना भाव भरा है, अवलोकन करें-दूसरा भगत भक्त भूषण भरत का। एक हरि सेवा में बनेवा बन-बन फिरा साकार हो तो भेद बता क्यों नहीं देते, हे राम! हमें अपना पता क्यों नहीं देते? धारक अपर जन सेवा के बरत का॥

हिन्दी-उर्दुकी साझा संस्कृति समाजसे किस प्रकार जुड़ी हुई हैं, इसकी एक बानगी देखें— जो खुदा मेरा वही तेरे प्रभु श्रीराम हैं। एक ही बात है कहने को फकत दो नाम हैं॥ कानपुरके युवा कवि अंसार कम्बरीकी 'मनमें दिया जलाओ रामका' शीर्षक रचनाकी कुछ पंक्तियाँ प्रस्तुत हैं-

अपने मन में जलाओ दिया राम का,

नाम जिसने भी लिया मन से राम का,

यों समझिये कि वो हो गया राम का॥

लोक निंदा न हो, त्याग दी प्रिय जानकी,

का।

नाम लेते रहो बस सियाराम

हम कागजी रावन को जला देते हैं हर साल, तुम भीतरी रावन को मिटा क्यों नहीं देते? जो लोग गरीबों को समझते हैं बहुत नीच, शबरी के उन्हें बेर खिला क्यों नहीं देते? मानवता जहाँ धर्म की सांसों की महक हो, ऐसा ही मेरा देश बना क्यों नहीं देते? दितया मध्य प्रदेशके कविवर नवीबख्श 'फलक' अपने समयके सफल रचनाकारोंमें थे। 'फलक' तुर्की टोपी लगाकर कवि-सम्मेलनोंमें जाकर सर्वप्रथम अपना परिचय देते थे। वे सुविख्यात पीताम्बरा पीठ दितयाकी सुन्दर ढंगसे

व्याख्या करते हुए कहते कि मैं वहाँसे आया हूँ, इस प्रकार

अपना परिचय देते हुए वे काव्यपाठ शुरू करते थे। उनकी

भाग ८९ 'अवधपुरीके नाथ' शीर्षक रचनाकी प्रस्तुत पंक्तियाँ उनके जिन्होंने हिन्दीमें दर्जनों ग्रन्थोंका सृजन किया है, वे राम-प्रेमका परिचय देनेके लिये पर्याप्त हैं— अलीगढ़ मुसलिम विश्वविद्यालयके पूर्व हिन्दी विभागाध्यक्ष भी थे। डॉ॰ नजीर मुहम्मदके नामसे प्रसिद्ध उन राम लखन अरु जानकी रोके बनहिं न जायँ, मनीषीका आत्मपरिचय इस प्रकार है-कठिन भूमि कोमल चरण 'फलक' पड़ेंगे पायँ॥ मैं मुस्लिम हूँ मेरा मजहब सदा यही देता है ज्ञान। दशरथ वृद्ध, राज्य-भार कौं संभारिहै को, देश प्रेम सर्वोच्च धर्म है 'हुब्बुल वतने मिनल ईमान'॥ कैसे फिर चौदह वर्ष कड़ पैहें नाथ। कुरान मेरा धर्म-ग्रन्थ रामायण मेरा जीवन-पथ है। कोमल चरण, बनभूमि है कठोर महा, पाँयन में 'फलक' तिहारे पड़ जैहें नाथ॥ गीता और हदीसों से भी पाया मैंने जीवन-रस है॥ डॉ॰ नजीर मुहम्मदकी काव्यकृति 'शतक-त्रयी' चलत कोर बन भूमि में, लक्ष्मन सीता साथ, चरण सरोजन में 'फलक' पर रहो रघुनाथ। के प्रारम्भिक पृष्ठपर 'दिलतोद्धारक-राम-शतक' की ये पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं-एक शताब्दी पूर्व विद्वान् ज्योतिर्विद् अहमद बख्श थानेसरी हरियाणामें निवास करते थे। वह श्रीरामके दिलतोद्धारक राम प्रभु, कीजै कृपा महान्। अनन्य भक्त थे। उन्होंने पूरी रामायण श्रीराम-जन्मसे वंचित-जन जा जगत में, पावहिं सुख सम्मान॥ राम-राज्याभिषेकतक लिखकर एक नये अध्यायका अमित स्नेह-श्रद्धा सहित, बिनवहु बारहिं बार। शुभारम्भ किया। उन्होंने हरियाणाकी चंबोली भाषामें दलितोद्धारक राम प्रभु करहु 'शतक' स्वीकार॥ काव्य रचनामें पूरी रामायण लिखी—उसे हरियाणा डॉ॰ नजीर मुहम्मदने केवट, अहल्या, जटायु, साहित्य अकादमीने 'अहमद बख्शकृत थानेसरी रामायण' भीलनी शबरी, गिलहरी, रजक आदिके प्रसंगोंका बड़ा नामसे प्रकाशित किया, वह जन सामान्यमें आज भी ही मार्मिक वर्णन किया है, जिससे उस राजतन्त्रमें लोकतन्त्रकी महत्ताको अभिव्यक्ति मिलती है-चर्चित है। रचनाकार ज्योतिषके भी बड़े विद्वान् थे, इसलिये इस रामायणमें ग्रह-नक्षत्रोंकी विशेष चर्चा हुई है। रामकथा में है बड़ा, महत्त्वपूर्ण एक भाग। बस्ती जनपदके एक श्रमजीवी, जिनका नाम लोकाराधन के लिये, सीता का परित्याग॥ रहमान अली 'रहमान' है, जो वहाँ रिक्शा चलाते हुए इक अनुसूचित जाति के, व्यक्ति की अभिव्यक्ति। कई काव्यकृतियोंका प्रकाशन भी कर चुके हैं। उन्होंने सामाजिक-मत मानकर, तजी प्रिया अनुरक्ति॥ कई विधाओंमें रामकी गाथाकी रचनाओंपर लेखनी तनिक रजक के कथन पै, सीता पत्नी त्याग। चलायी है। उदाहरणार्थ एक गजलकी चार पंक्तियाँ रामचन्द्र जरिबे करे ग्लानि, विरह की आग॥ प्रस्तुत कर रहा हूँ— दिलत जाति की भीलनी, ताके जूठे बेर। कुछ भी फिकर मुझको नहीं है नाम की। खाए रुचि सों राम जी, प्रेम भावकूँ हेर॥ दिल में आस्था जब लगी श्रीराम की॥ सबरी भाव विभोर के, अमृतोपम बेर। गर जान भी ले ले जमाना गम नहीं। लक्ष्मन आँखि बचाइके, फेंके करी न देर॥ जपता रहूँगा नाम मैं सुखधाम की॥ सीता-हरन संदेश दै, तजे गीध ने प्रान। इसके अलावा भी इन्होंने कई काव्य कृतियोंकी स्वयं श्राद्ध कर राम ने, दियो पिता सम मान॥ रचना की, इनकी सबसे चर्चित कृति 'रहमान रामका वन-गमन के समय ही, सरयू तट को पाय। प्यारा है ' है। इनकी रचनाओं में सर्वाधिक चर्चित लम्बी आ अनुसूचित जाति के, केवट करी सहाय॥ रचना—'कैकेयी कथा' है। कविवर श्रीफैयाज अहमद 'परवाना प्रतापगढी' Hinguismoरों इत्लाल ने क्यां की पक्षां / बहर रहा है hatmaid, अती महि अविधि के अविधी के अधिक हो स्थापिक हो स्थ

संख्या ५] रामकथामें मुसलिम सार्वि	हेत्यकारोंका योगदान २७
	<u>************************************</u>
हैं। इनकी नवप्रकाश्य काव्यकृति 'राम रसायन' पर	पहले यह बताना चाहता हूँ कि इस जलील जमानेके
अनेक मनीषियों—रचनाकारोंने प्रशंसामें लेखनी चलायी	बदनसीब हिन्दू और मुसलमानोंकी बदमजगी हमेशा
है। उसकी कुछ पंक्तियाँ बानगी तौरपर प्रस्तुत कर	कायम रहनेवाली नहीं है, वह वक्त दूर नहीं है, जब
रहा हूँ।	हमारी जिन्दादिल शरीफ आजाद औलादें इस भयानक
भगवान् रामके वनगमनकालमें उनका रूप-स्वरूप	जमानेको याद करके शरमायेंगी और भारतकी तारीखके
देखकर ग्रामीण नर–नारी धन्य होते हैं। बधूटियाँ	इस स्याह-सफेदको अपने दामनका सबसे गन्दा धब्बा
परस्परमें उनके सुन्दर रूपका जो रोचक चित्रण करती	समझेंगी। इस जमानेमें सबसे बड़ी देशभक्ति यह है कि
हैं, परवानाजी उसे बड़े रोचक अंदाजमें कहते हैं—	हिन्दू-मुसलमान एक-दूसरेके तमद्दुनको समझें और
एक सखी दूसरी सिख से, कुछ बोलत की सरमाय रही।	उसकी इज्जत करना सीखें।'
तिसरी कै न कंठ खुला तनिकौ, धरती पै गिरी मुरझाय रही॥	'मैं भी इसी पाक सर जमीनका गेहूँ खाता हूँ,
अस सुंदर रूप न देखा कतौं, देहियां-देहियां सिहराय रही।	इसका पानी पीता हूँ और यहींकी हवासे मेरी जिन्दगी
सुकुमार सरीर सुसोभित, कर तीर-कमान सोहाय रही॥	कायम है। मेरा गोश्त, मेरी हड्डी इसी जमीनकी पवित्र
बिना सीढ़ीके जैसे अट्टालिकापर चढ़ना अति	मिट्टीकी दूसरी शक्ल है। आज शाम रामभक्ति मुझे यहाँ
कठिन कार्य है, जैसे बिना रसूलके अल्लाहतक पहुँचना	खींच लायी है तो यह न समझिये कि मैं रामचन्द्रजीको
कठिन है, वैसे ही साहित्यकारकी दृष्टिमें रामदूत—	सिर्फ एक हिन्दू अवतार समझकर, यहाँ हाजिर हुआ हूँ।
हनुमान्के बिना रामतक पहुँचना मुश्किल है। तभी	नहीं हरगिज नहीं। मैं एक हिन्दुस्तानीकी हैसियतसे खुद
परवानाजी उस असीम शक्तिका यशोगान अपने शब्दोंमें	उनकी जातपर नाज करता हूँ, उन्हें अपना हीरो
इस प्रकार करते हैं—	समझकर अपनेपर फख्न करता हूँ और इस जोशमें कि
प्रभुराज सिया अवधेसपुरी, श्री मानस-वेद-पुरान की जै।	ये मेरे वतनके राजा और महासेवक थे, अपना सिर ऊँचा
जन-मानस के इस प्रेम की भी, श्री राम-कथा-रसपान की जै॥	कर लेता हूँ।'
एक साथ कहैं सब लोग यही, इस भारत देश महान की जै।	विद्वान् लेखक सैय्यद मुहम्मद महमूद 'मख्मूर' ने
'परवाना' पुकारे यही मन से, बजरंग बली हनुमान की जै॥	त्यागकी नगरी 'चित्रकूट' का अपनी कलमसे कितने
हरदोई जनपदमें महाकवि 'रसलीन' के गाँवमें	मार्मिक ढंगसे वर्णन किया—'रामचन्द्रसे निगाह हटे तो
जन्मे डॉ॰ रफीक अहमद 'रसिसन्धु' अपनी सरस	भरत और लक्ष्मणतक आये। यह दोनों शहजादे भाईके
वाणीसे कवि-सम्मेलनोंमें छा जाते हैं, उनकी ये सामयिक	मुहब्बतके ऐसे दीवाने थे कि अपनेका होश न था। मैं
पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं—	हैरान हूँ कि दोनोंमें किसको ज्यादा वफादार कहूँ।
राम के राज्य में चारों दिशाओं में प्रेम था थी दया और भलायी।	कॉंटेमें तौल दीजिये तो दोनों गालिबन बराबर उतरेंगे।
किंतु क्या आज हुआ है कि पूछति ही नहीं कोई भी पीर परायी॥	एकने मुहब्बतके जोशमें तख्तो-ताजसे मुँह फेरकर
आजसे ६६ वर्ष पूर्व अप्रैल १९४७ ई० को जनाब	संन्यास ले लिया तो दूसरा हर मुसीबतमें सायाकी तरह
सैय्यद मुहम्मद रिजवी 'मख्मूर' ने 'रामनौमी' शीर्षक	दमके साथ है। मैं जिस वक्त यह तस्वीर जेहनके सामने
लेखमें अपनी भावनाओं को किस प्रकार रेखांकित किया	खींचता हूँ कि भरतने रामचन्द्रजीके खड़ाऊँ तख्तपर
है, द्रष्टव्य है—	रखकर चित्र लगा दिया और खुद फकीर हो गये तो
'रामनौमी' के जश्नमें मेरी शिरकतसे बाज भाइयोंको	दिल लरज आता है। अल्लाह! वह इंसान किस तरहका
खुशी और बाजको ताज्जुब होगा। जिन्हें खुशी है, मैं	होगा जो ऐसी सोर चश्मी, इतनी आलमी हिम्मत दिखा
खुद उनसे ज्यादा खुश हूँ, लेकिन जिन्हें ताज्जुब है, उन्हें	सकता है। ये ही वे बातें हैं, जो बताती हैं कि हुकूमत

िभाग ८९ और दौलत, आराम और राहतसे बढ़कर कोई चीज भी है और उसका नाम मुहब्बत है।' वस्तुत: रामकथामें सिया-राम-लखन, पवन-सुत सत्ता-त्यागका जो संघर्ष हुआ, वह अपने ढंगमें वर्तमान चित्रकूटको प्रणाम साहित्य-मनीषी डॉ॰ शैलेश जैदी (पूर्व अध्यक्ष सत्ता, संघर्षके युगमें अजूबा-सा लगता है। चित्रकृट और अब्दुर्रहीम खानखाना एक-दूसरेके हिन्दी विभाग, अलीगढ़ मुसलिम विश्वविद्यालय)-ने पर्याय बन चुके हैं, सैकड़ों वर्षों बाद भी उनकी ये चर्चित खडी बोलीमें राम काव्यकृति—'अब किसे पंक्तियाँ जन-जनका कण्ठहार बन चुकी हैं-बनवास दोगे' की रचना की, जिसकी सुप्रसिद्ध हिन्दी विद्वान् और इलाहाबाद विश्वविद्यालयके पूर्व विभागाध्यक्ष चित्रकूट में रिम रहे, रहिमन अवध नरेश। डॉ॰ जगदीश गुप्ताने भी प्रशंसा की है, उसके चित्रकूट-जापर विपदा परत है, सो आवत यहि देश।। वर्णनका अनोखी शैलीमें भावपूर्ण वर्णन डॉ॰ शैलेश भगवान् श्रीरामपर रहीमजीकी कितनी श्रद्धा थी, वह निम्न पंक्तियोंसे प्रकट होता है-जैदीने किया है, कुछ अंश इस प्रकार हैं—'आदमीकी भाषा /प्यारके अटूट सम्बन्धोंकी भाषा है। यह भाषा आदमीको दुख नर सुनि हांसी करें, नाहिं धरावत धीर। कहीं सुनै, सुन दुख हरैं, रहिमन वे रघुवीर॥ देती है चित्रकृटकी ऊँचाई/विचारोंकी गरिमा/सम्बन्धोंकी अर्थात् लोग दूसरेका दु:ख-दर्द सुनकर हँसी गहराई। वह भाषा कतरती है अफवाहोंके पंख/मिलाती है उडाते हैं, उसे सुख-शान्ति प्रदान करनेवाले तो दशरथनन्दन भाईको भाईसे/बेटेको माँसे, इस भाषाको समझता है/ 'श्रीराम' ही हैं। अयोध्याका एक-एक आदमी, शायद इसलिये भरतकी एक राष्ट्रकवि रामधारी सिंह 'दिनकर' ने 'रहीम' के आवाज/उगाती है अयोध्यामें सैकड़ों फूल/भरती है फलोंमें विषयमें उचित ही कहा है-सुगन्ध / निकालती है अयोध्याकी गलियों, सड़कों और 'अपने धर्म और आध्यात्मिक विश्वासपर सुदृढ् मकानोंको चित्रकूटसे।' रहकर भी मुसलमान कितना अधिक भारतीय हो सकता यह भरतके व्यक्तित्वकी गरिमा है कि वह उठाता है/ है, रहीम इसके ज्वलन्त प्रमाण हैं।' कैकेयीके चेहरेपर पड़ी सुनहरी नकाब/तोड़ता है राजमाता प्रथम रामायण मेलाके समापन भाषणमें तत्कालीन बननेका ख्वाब।'''' महामहिम राज्यपाल अकबर अली खाँने कहा—'मेरा मेरे अन्तरके बीचों बीच गंगाकी तरह बहती है/उस भाग्य है कि आप लोगोंके बीच पवित्र भूमि चित्रकूटमें गंगाकी तरह जो मेरी माँ है/जो मेरा देश है, जो भरत रामके हैं। रामायणके सिद्धान्तोंको हम जीवनमें उतारें, जिन्दगीमें रिश्तेकी /रुपहली दस्तावेज है — चित्रकूट। लायें। सभी इंसान समान हैं—यही पैगाम तुलसीका है। सुविख्यात कथाशिल्पी पद्मश्री डॉ॰ नरेन्द्र कोहलीके यही सन्देश रामायणका है। इसी भावनाको लेकर मैं अनुसार एकहीमें एकसे अधिक धर्म उत्पन्न हो सकते रामायण और तुलसीको सलाम करने आया हूँ। हैं। इसे ही हम सांस्कृतिक राष्ट्रवाद कहते हैं। रामकथाके भगवान् श्रीरामकी लीला-स्थली चित्रकूटको दीन ये मुसलमान रचनाकार भी अपनी उसी संस्कृतिसे मुहम्मद 'दीन'की पंक्तियोंमें अवलोकन करें '--अभिभृत होकर लिख रहे हैं। ज्ञातव्य हो फारसीमें २००

वारिये।'

'अवध अयोध्यासे भी पावन है चित्रकूट, प्रकृतिने सुषमा समूची ही बिखेरी है।'

कल-कल स्वर है मन्दािकनी पयस्वनीका,

ध्वनि राम-सीता मठमें

रामायणें लिखी जा चुकी हैं या अनूदित हो चुकी हैं।

इसीलिये भारतेन्दु हरिश्चन्द्रकी ये पंक्तियाँ याद आ गयीं—'*इन मुसलमान हरिजनन पै कोटिन हिन्दुन*

पढ़ना और है, गुनना और! (श्रीकृष्णदत्तजी भट्ट) पोथी पढ़ि पढ़ि जग मुआ, पंडित भया न कोय। mean might be distinguished as plain and fancy, or ढाई अच्छर 'प्रेम'के पढ़े सो 'पंडित' होय॥ animal and spiritual, or of the heart and of the शिक्षाका दिन-दिन प्रचार बढ रहा है। स्कूल खुल head. Perhaps the simplest way to describe the रहे हैं, कॉलेज ख़ुल रहे हैं, विश्वविद्यालय ख़ुल रहे हैं, difference between the two sorts of happiness is शोध-संस्थान खुल रहे हैं। पढ़ाईके लिये सुविधाएँ to say that one sort is open to any human being, बढायी जा रही हैं। बजटमें लाखों-करोडों रुपयोंका and the other only to those who can read and आयोजन किया जा रहा है। शिक्षा-आयोग बन रहे हैं। write.'* देशी, विदेशी, अन्ताराष्ट्रीय संस्थाएँ खड़ी की जा रही 'प्रसन्नता दो प्रकारकी है—एक तो सीधी-सादी, हैं। बच्चोंके लिये, स्त्रियोंके लिये, अधवयसोंके लिये दूसरी कल्पना-मिश्रित। एक पाशविक, दूसरी आध्यात्मिक,

पढ़ना और है, गुनना और!

मिटानेके लिये विश्वभरके विद्वान्, राजनीतिज्ञ, समाजसुधारक ज्ञानकी जलती हुई मशालें लेकर बाहर निकल पड़े हैं। ऐसा लगता है कि कुछ ही बरसोंके भीतर विश्वसे अशिक्षा और अज्ञानका नामोनिशान ही मिट जायगा। बहुत खूब। कौन न स्वागत करेगा इस शिक्षा-अभियानका?

संख्या ५]

'अँगुठाछाप' लोग शेक्सपीयर और मिल्टनपर, कैंट और हैगेलपर बहस करने लगें; ज्ञान और विज्ञानकी प्रगतिपर वाद-विवाद करने लगें; राजनीति और समाजशास्त्र, इतिहास और मनोविज्ञानकी गुत्थियाँ सुलझाने लगें—इससे बढकर और क्या चाहिये ? अशिक्षित लोगोंका बौद्धिक धरातल ऊँचा उठे, वे भी अपनेको, समाजको, विश्वको भलीभाँति समझकर अपनी और परायी

समस्याओंपर चिन्तन करने लगें, इससे अच्छा और क्या

होगा? आज जिनके लिये 'काला अक्षर भैंस बराबर'

है, कल वे ही संयुक्त राष्ट्रसंघमें उपस्थित समस्याओंपर, संसद् और विधानसभामें उपस्थित बिलोंपर अपने मत व्यक्त करने लगें, तो इसका स्वागत कौन न करेगा? अज्ञानान्धकारको मिटानेके लिये किया जानेवाला कोई भी आन्दोलन प्रशंसनीय है, अभिनन्दनीय है। बर्ट्रेण्ड रसेल लिखते हैं—

'Happiness is of two sorts. The two sorts I

* Bertrand Russell: The Conquest of Happiness. p. 93

पढ़ाईका प्रबन्ध हो रहा है। अज्ञानके अन्धकारको एक हृदयकी, दूसरी मस्तिष्ककी। एकका आनन्द कोई भी मनुष्य उठा सकता है, दूसरीका आनन्द केवल वे ही उठा सकते हैं, जो पढ़े-लिखे हैं।' मतलब नाख्वांदा लोग उस प्रसन्नतासे वंचित रह जाते हैं, जो पढ़े-लिखे लोगोंके ही हिस्सेमें लिखी रहती है। जरूरी है कि प्रसन्नताका यह आनन्द हर आदमीको

> चाहिये। परंतु क्या साक्षरतासे ही विश्वकी सभी समस्याओंका निदान निकल आयगा? पोथी पढ़ लेनेसे ही आजकी स्थितिमें कल्पनातीत सुधार हो जायगा? शिक्षाका प्रचार होनेसे ही अज्ञानका पर्दाफाश हो

> मिल सके। इसलिये हर आदमीको साक्षर होना ही

जी नहीं। बात ऐसी नहीं है। रस्किनने इस समस्यापर गम्भीरतासे सोचा था। वह कहता है— 'You might read all the books in the British Museum and remain an utterly 'illiterate' uneducated person; but if you read ten pages of a good book, letter by letter that is to say, with real

accuracy, ""you are forever more in some mea-

जायगा? मनुष्यका सर्वांगीण विकास हो जायगा?

भाग ८९ होनेके बाद पहला ही वाक्य गुरुजीने बताया था—'क्रोध sure an educated person.'* 'ब्रिटिश म्युजियमकी सारी किताबें पढ़कर भी मत करो।' आप 'अशिक्षित' मनुष्य बने रह सकते हैं और किसी सुशील बालक तभीसे एकान्तमें जाकर उसपर अच्छी पुस्तकके केवल दस पन्ने पढकर भी आप किसी विचार करने लगा। कानोंसे सुने पाठको रोम-रोममें हदतक 'शिक्षित' बन सकते हैं, बशर्ते कि आप पढें उतारने लगा। बेचारे युधिष्ठिरको उस शिक्षा-कलाकी ठीकसे, प्रामाणिकतासे।' खबरतक न थी, जिसकी बदौलत साधारण बाबू और यह 'ठीकसे' पढना क्या है? पण्डित लोग विद्यारूपी गंगाकी नहर अपने मस्तिष्कपर इसका नाम है—'गुनना'। इस सफाईके साथ बहा देते हैं कि रुडकीवाली नहरके पढना और है, गुनना और। साथ एक बूँद भी पुलसे नीचे गिरने नहीं पाती। ऊपर-आज पढ़े-लिखे तो हजारों हैं, लाखों हैं, करोड़ों ऊपर तो गंगा बहती हैं और निचला हिस्सा सूखा-का-हैं, पर गुने हुए लोग कितने हैं। शायद अंगुलियोंपर सुखा पड़ा रहता है। देखनेमें तो सैकड़ों पुस्तकें पढ़ गिननेलायक मुश्किलसे निकलेंगे। डालीं, परीक्षाओंमें पूरे-पूरे नम्बर हासिल किये, विश्वविद्यालयमें पारितोषिक और पदक प्राप्त किये, किंत भीतर एक बूँद भी न पड़ने दी। आचरणमें कुछ आजसे ६६ साल पहले स्वामी रामतीर्थने अपने 'अलिफ्' नामके रिसालेमें एक लेखमें इसका एक प्रवेश न होने दिया। बेचारा युधिष्ठिर इस कलासे बढ़िया उदाहरण दिया था। बिलकुल अपरिचित था। उसने जो कुछ पढ़ा, झट उसके बचपनमें जब कौरव और पाण्डव एक साथ पढते हृदयमें उतरने लगा। थे तो एक दिन उन सबकी परीक्षा ली गयी। किसी उसके विचार-क्रमका रूप यह था— 'क्रोध मत करो'—भला क्योंकर? हमें तो क्रोध विद्यार्थीने आधी किताब सुना दी, किसीने पूरी। पर युधिष्ठिरसे पूछा गया तो उसने कहा—'मैंने तो केवल आ जाता है। क्यों आता है? उचित है या अनुचित? दो वाक्य याद किये हैं।' क्रोधके बिना काम चल सकेगा या नहीं ? यदि क्रोध न परीक्षक महाशयको अत्यन्त क्रोध हो आया। वे किया तो नौकर लोग ढीठ हो जायँगे, काम अच्छा न बोले—'अरे दृष्ट! तू तो सबसे बडा है और अभीतक करेंगे, रोब उठ जायगा, प्रबन्ध बिगड जायगा, रसोई सिर्फ दो वाक्य याद किये। यह कैसी सुस्ती है। तुझे समयपर न तैयार होगी। आदि। लज्जा नहीं आती? चुल्लूभर पानीमें डूब मर।' क्रोधको छोड़नेमें कठिनाइयाँ तो होंगी, पर क्या परीक्षकने इतनेसे ही बस न की। लगे चपत-पर-क्रोधको छोडना असम्भव है? यदि असम्भव होता तो चपत मारने! बेचारे राजकुमारके कपोल लाल हो गये, गुरुजी ऐसा उपदेश ही न देते। शास्त्र ही ऐसा अनुशासन पर वाह रे राजकुमार! उफ़तक नहीं की। शान्त खड़ा क्यों देते? अब क्या करें ? क्रोध तो आ ही जाता है। तो क्या रहा। यह देख परीक्षकको अत्यन्त विस्मय हुआ। सोचा यह उचित होगा कि मान तो लिया जाय कि क्रोध करना कि आज दुर्योधनको किसी अपराधपर धमकाना चाहा अनुचित है, पर समयपर क्रोध आ जाय तो आ जाने दें? था तो वह पगडी उतारनेको तैयार हो गया था। भगवन्! नहीं, यह तो छल है। गुरु और शास्त्रके साथ धोखेबाजी यह कैसा राजकुमार है कि इसे पीटते-पीटते अधमरा है। मुँहसे 'हाँ' कर लेना और अमलमें 'न' लाना। कर दिया है और इसने चूँतक नहीं की। प्रसन्नवदन अबसे दृढ़ संकल्प करते हैं कि 'क्रोधको पास न खडा है। फटकने देंगे। अब युधिष्ठिरका हाल सुनिये। अक्षर-परिचय क्रोध क्यों उत्पन्न होता है ? प्राय: जब कोई काम Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Sharkashin: Sesame and Lilies. p. 14

पढ़ना और है, गुनना और! संख्या ५] बिगड़ता है या कोई चीज खराब हो जाती है तो क्रोध कि डल्म चंदां वेशतर आता है। अरे मन! काम तो एक बार बिगड़ चुका। तू तो नेस्त अमल दर नादानी। उसपर चित्तको क्यों बिगाडता है? चीज तो खराब हो 'तू चाहे जितनी विद्या पढ़ जाय, यदि उसपर गयी, होगी दस, बीस, पचास, सौकी, पर उसके लिये अमल नहीं है, तो सिर्फ नादानी है।' चित्त-जैसी अनमोल चीजको क्यों खराब कर बैठता है? आनन्द मेरा जन्मजात स्वत्व है। किसी सांसारिक वस्तुके तो, इसका नाम है पढना, इसका नाम है गुनना। लोग पढते हैं ऊँचा पद पानेके लिये। धन कमानेके लिये इस जन्मजात स्वत्वको क्यों खोऊँ? राजकुमारोंके यहाँ रिवाज तो है कि बात-बातपर लिये। लोगोंसे प्रशंसा पानेके लिये। ऊँचा रुतबा पानेके लिये। उरदकी पीठीकी तरह ऐंठना, किंतु गुरुजीका उपदेश कुछका यह हौसला पूरा हो जाता है। है—'शान्त रहो, मनको हिलने ही न दो।' गुरुजीकी इस पर यही तो जीवनका लक्ष्य है नहीं। आज्ञाका मैं पालन करूँगा, चाहे सारी दुनिया मेरे यही तो जीवनकी प्रगति है नहीं। खिलाफ हो। रस्किनके शब्दोंमें जीवनकी प्रगतिकी व्याख्या इस प्रकार सोच-विचार करते-करते युधिष्ठिरने यह है-उन तमाम मौकोंको याद किया, जहाँ उसकी शान्तिके 'He only is advancing in life, whose heart is पैर फिसला करते थे और अपने-आपको खुब समझाया getting softer, whose blood warmer, whose brain 'ऐ अनजान मन, अबतक जो हुआ सो हुआ। आगेसे quicker, whose spirit is entering into Living Peace.' 'केवल उसीका जीवन प्रगतिकी ओर जा रहा है, ऐसे कोमल समयोंपर सँभलकर चलना। जब कोई कुछ कट्वाक्य कहे, गाली दे, काम बिगाड दे, हमारे खिलाफ जिसका हृदय दिन-दिन मुलायमसे मुलायम होता जा साजिश रचे अथवा जब चित्त अस्वस्थ हो, तब तू शान्त रहा है, जिसके रक्तकी ऊष्मा बढती जा रही है, जिसका मस्तिष्क दिन-दिन तीक्ष्ण होता चल रहा है और रहा कर।' इसके पश्चात् युधिष्ठिरने बहुत बार जान-बूझकर जिसकी आत्मा स्थायी शान्तिकी दिशामें प्रवेश करती अपने-आपको ऐसे स्थानोंपर पहुँचाया, जहाँ दुर्योधन आ रही है।' आदिने उसे छेड़ा और दु:ख देना चाहा, किंतु युधिष्ठिरने हर बार 'क्रोध मत करो'—इस पाठका व्यावहारिक शिक्षाका लक्ष्य, विद्याका लक्ष्य है-मृक्ति। अनुभव सफलताके साथ किया। जब क्रोध बिलकुल 'सा विद्या या विमुक्तये।' छूट गया तो चित्तमें चैन रहने लगा। आनन्द और हम नाना प्रकारके बन्धनोंसे मुक्त न हुए, मानव प्रसन्तताने रंग जमाया, मानो मुफ्तमें खजाने हाथ आ मानवको बाँटनेवाले कटघरोंमें ही कैद बने रहे तो गये। अनुभवने युधिष्ठिरको यह सिद्ध कर दिखाया कि धिक्कार है हमारी शिक्षापर, धिक्कार है हमारी विद्यापर। सब लोगोंका यह ख्याल गलत है कि 'क्रोधके बिना हमारे यहाँ तो इसीलिये कहा है कि एक ही शब्द काम नहीं चल सकता।' पढ लो—ढाई अक्षरका छोटा-सा शब्द है—'प्रेम'। परीक्षक महोदयने जब देखा कि युधिष्ठिरपर बस, बेड़ा पार है। मारका कोई असर नहीं हो रहा है, तब वे समझे-मानव-मानवसे प्रेम। पशु-पक्षीसे प्रेम। कीट-'ओहो! यह लड़का तो हमारा भी गुरु है। यह हमको पतंगसे प्रेम। पेड़-पौधोंसे प्रेम। चर-अचरसे प्रेम। सृष्टिसे सिखा रहा है कि पढना किसको कहते हैं?' प्रेम, सृष्टिकर्तासे प्रेम। जीवनकी सार्थकता इसीमें प्राप्त हो जायगी। इसके उनकी आँखोंमें आँसू डबडबा आये। बच्चेको गोदमें लेकर वे फूट-फूटकर रोने लगे। अलावा न कुछ पढनेकी जरूरत है, न कुछ गुननेकी?

मनको वशमें कैसे करें? (श्रीराधेश्यामजी चाँडक)

मनके सन्दर्भमें हमारी चिरपरिचित धारणा रही है निश्चित रूपसे केन्द्रित होगा। मस्तिष्कमें विचारोंके पुलिन्दे नहीं उठेंगे, मन स्थिर रहेगा।

कि मन चंचल है, मानता ही नहीं इसे वशमें करना बहुत कठिन है। कुछ हदतक बात सही भी है मगर इसे पूर्णत: स्वीकारना ठीक नहीं। कारण, यह कार्य दुष्कर अवश्य

है, परंतु असम्भव नहीं।

हम अगर ठोस मन्थनकर इसके कारणोंकी तहतक पहुँचनेका प्रयास करें, जिसकी वजहसे ऐसा होता है

तो हम पायेंगे कि इसके पीछे मुख्य एक ही कारण है और वह है—हमारी लालसाएँ, नाना प्रकारकी

जिज्ञासाएँ—जो मनके ठहरावका ताना-बाना बिखेरकर उसे अस्थिर कर देती हैं और मनकी यही अस्थिरता उसे चंचलता प्रदान करती है। फलस्वरूप मन इधर-

उधर भटकने लगता है। दूसरा मुख्य कारण 'मोह' है, जो 'मेरा-तेरा' का जन्मदाता है। यह 'मेरा-तेरा' आसक्ति अथवा मन-

मुटाव पैदा करता है, जो मनको उसीमें लगा देता है। मन यह सोचनेपर विवश हो जाता है कि कौन मेरा है, कौन पराया और फिर उसीमें रमने लगता है। जहाँ

अपना है वहाँ राग है और जहाँ पराया है वहाँ द्वेष। ये 'राग-द्वेष' दोनों सगे भाई हैं। ये ही मनके भटकावकी मूल जड़ हैं। हमारे जीवनमें न राग अच्छा है और न

द्वेष। सम और निरपेक्ष बने रहना ही उत्तम है। इसके लिये आवश्यक है कि सम और विषम—दोनों परिस्थितियोंमें

हम एक-से बने रहे। सकारात्मक परिस्थितिमें भी उसी प्रकृतिमें रहें जैसा कि नकारात्मक स्थितिमें। यह मनको

नियन्त्रित करनेका सबसे सरल उपाय है।

अब तीसरी बात आती है, वह है—हमारी

है, उसीसे काम चलाये। विलासितासे दूर जीवनको

सरल, सदाचारी एवं कर्तव्यनिष्ठ बनाये। सादगीमय

आवश्यकताओंमें कमी करनेकी। जितना जो आवश्यक

५० किलोग्राम वजन उठानेका; पैरोंको १५-२० किलोमीटर

चौथी और आखिरी बात है—हम जन-कल्याणकारी

कार्योंमें लगकर अपने-आपको उसीमें व्यस्त रखकर

आत्मसन्तुष्टि प्राप्त करें। 'जन-कल्याण' से तात्पर्य

है—'जीव-कल्याण'। किसी भी देहधारी जीवात्माको

हर सम्भव सुख पहुँचानेका प्रयास करें। नि:सन्देह इससे

मन-मस्तिष्कको असीम शान्तिकी प्राप्ति होगी। मन

चंचलतासे दूर रहकर एकाग्रचित्त और प्रसन्न रहेगा।

अगर मन भटक ही गया है तो उसे वशमें कैसे किया

जाय? यह हमारा मूल प्रश्न है, जिसपर विवेकपूर्ण

विचार करना आवश्यक है। पूर्व इसके कि हम 'मन'

पर विचार करें, आइये 'तन' के माध्यमसे इसे सरलतासे

हमारे वशमें रहते हैं। जिसे हम जो आदेश देते हैं, वह

उसका त्वरित पालन करता है। हाथोंको जब हम उठाना

चाहें, वे तुरंत उठते हैं। पैरोंसे चलने, पटकने, दौड़ने

आदिका जो आदेश दें, तदनुरूप वे कार्य करते हैं। ठीक

इसी तरह आँख, नाक, कान आदि भी हमारे निर्देशोंका

तुरंत पालन करते हैं। एक काम हम करें—४-५ दिनोंतक

तन अर्थात् शरीर, शरीरके सारे अवयव (अंग)

ये सब हुए-मनको वशमें करनेके पूर्वप्रयास। अब

सम्भव है ? हमारे आदेश धरे-के-धरे रह जायँगे। चाहकर भी हमारे अंग वे कार्य कर नहीं पायेंगे। क्यों? इसका कारण क्या है? पहले तो वे हमारा सारा कार्य

[भाग ८९

जीवन सदैव शान्तिमय होगा। मन सन्तुष्ट रहेगा तो

हम अन्न-जल ग्रहण न करें, पूर्ण रूपसे कोई आहार न लें तब उस स्थितिमें हम आदेश दें-हाथोंको २५-

समझनेका प्रयत्न करें।

पैदल चलनेका, आँखोंको लगातार जागनेका, तो क्या यह

तूरंत कर देते रहे हैं और अब नहीं। सीधा-सा उत्तर है

उन्हें ख़ुराक (भोजन) नहीं मिला, जिसके कारण वे

संख्या ५] जीवनकी र			
_{ष्टक्रक} क्षक्रक्रक्रक्रक्रक्रक्रक्रक्रक्रक्रक्रक्रक	<u>क्रक्षक्षक्षक्षक्षक्षक्षक्षक्षक्षक्षक्षक्षक</u>		
उसे हम खुराक तो देते नहीं, जिस वजहसे वह शिथिल	3		
<u> </u>	अतएव 'प्रभु-भजन' द्वारा मनको वशमें करना		
हो जाता है और कार्य करनेमें अक्षम हो जाता है। अगर	बड़ी सामान्य बात है। हम ईश-वन्दना किसी भी रूपमें		
हम 'तन' की तरह 'मन' को भी समय-समयपर सही	करें—चाहे वह भजनोंके माध्यमसे हो, जीवसेवा हो,		
एवं पर्याप्त 'खुराक' देते रहे तो वह निश्चितरूपसे हमारी	शास्त्र पठन-पाठन हो, सन्त-समागम हो, करुणामय		
अभिलाषाके अनुरूप कार्य करता रहेगा। हमारे आदेशोंका	नि:स्वार्थ भावसे जीवदया हो, सरल एवं अध्यात्ममय		
निर्वहन वह अविलम्ब करता रहेगा।	जीवन हो मन वशमें अवश्य होगा, इसमें किसी		
जिस प्रकार हमारे तन (शरीर)-की 'खुराक'	प्रकारकी कोई अतिशयोक्ति नहीं। मनको वशमें करनेका		
हमारा 'भोजन' है, ठीक उसी प्रकार हमारे 'मन' की	यह सीधा और सरल उपाय है।		
			
_{कहानी} — जीवनकी	उपलब्धि		
(श्रीरामेश्वर	जी टांटिया)		
ईसा पूर्व पहली शताब्दीमें रोममें सिसेरो नामका	अफ्रीकासे लाये सैकड़ों गुलाम रोमन सामन्तोंके घरोंमें		
एक विलक्षण विचारक और वाग्मी हुआ। अपने	रहते।		
सदाचार, सद्विचार और निष्ठापूर्ण जीवनके कारण	ईसासे लगभग ५० वर्ष पूर्व सेनापति सीजर		
जनमानसको उसने प्रभावित किया था।	फौजके बलपर रोमका एकाधिनायक बन बैठा। जिन्होंने		
रोमन सभ्यता और संस्कृतिका वह स्वर्णिम युग	विरोध किया, मौतके घाट उतार दिये गये। प्रान्तोंमें		
था। पश्चिममें ब्रिटेन, रोम और स्पेन एवं पूर्वमें मेसोपोटामिया	विद्रोहके प्रयासको क्रूरतासे कुचल डाला गया। सीजर!		
और बेबीलोन तथा दक्षिणमें भूमध्यसागरतटीय अफ्रीकाके	महान् सीजर!! लोग नामसे थर्रा उठते।		
देश विशाल रोमन साम्राज्यके अंग थे। रोमकी सड़कोंपर	यद्यपि सिसेरो व्यक्तिगत विरोधमें नहीं पड़ा, परंतु		
विदेशोंसे लाये सोने, सुन्दरियों और गुलामोंका प्रदर्शन	जनतंत्रके सिद्धान्तोंका रोमन फोरममें डटकर प्रचार		
सामन्त बड़ी शानसे करते थे। वह जमाना था, जब	करता रहा। उसकी जनप्रियता देखकर सीजरने उसके		
संसारकी सभी सड़कें रोमको जाती थीं।	प्राण नहीं लिये, केवल राजधानीसे निर्वासित कर दिया।		
आमोद-प्रमोद, भोग-विलास और बुद्धि-विलास	अपने कुछ नजदीकी शिष्यों और गुलामोंके साथ		
रोमन नागरिकोंकी दिनचर्या थी, तर्क-वितर्कमें पराजित	वह एक गाँवमें रहकर जनतंत्रपर ग्रन्थ लिखने लगा।		
कर देना प्रतिष्ठाकी बात समझी जाती थी। यदि इससे	बीच-बीचमें उसे सीजरके आतंक और अत्याचारोंकी		
निर्णय नहीं होता तो तलवारें खिंच जाती। रोमके चौकमें	खबरें मिलती रहतीं।		
असि-द्वन्द्व और वाक्-द्वन्द्वके दृश्य आये दिन देखनेमें	अधिनायकवाद महत्त्वाकांक्षी अधिनायकोंको जन्म		
आते। सिसेरोके भी व्याख्यान वहाँ होते। उसका	देता है और अधिनायकका अन्त भी उन्हींके द्वारा होना		
सिद्धान्त था कि जनतंत्र ही शासन-संचालनका श्रेष्ठ	एक स्वाभाविक प्रक्रिया है। एक दिन सीजरके विश्वस्त		
पंथ है। जनता मंत्रमुग्ध होकर सुनती।	मित्र और सेनापति ब्रूट्सने सभासदोंकी एक बैठकमें		
उन दिनों यूरोपमें समता और बन्धुत्वकी बात कोई	उसकी हत्या कर दी। मरते समय सीजर केवल इतना		
नहीं कहता था। गुलामीकी प्रथा प्रचलित थी। सुसभ्य	ही कह पाया ''ब्रूट्स! तुम भी'''''।		
ग्रीक और रोममें भी दास सम्पत्तिके रूपमें थे। अरब और	राजधानीमें अशान्ति फैल गयी। विशाल रोमन		

साम्राज्यमें अव्यवस्था बढ जानेके लक्षण दिखायी देने एकमत हो गये। इस प्रकार रोमन साम्राज्यका बँटवारा हुआ। लगे। सेना लेपिडिसके साथ थी। राजकोष और साधन सिसेरोको सूचना मिल गयी। कुछ समय बाद प्रधानमंत्री एण्टोनीके पास थे। किंतु अधिनायकवादसे 'रिपब्लिका' ग्रन्थ पूराकर अपने पुत्र और मित्रोंको सौंपते हुए उसने कहा—'मेरे जीवनका उद्देश्य पूरा हुआ, त्रस्त जनता थी युवक नेता आक्टेवियसके साथ। तीनोंमें युद्धकी तैयारियाँ होने लगीं। अब तुम्हें कष्ट न दूँगा।' उन लोगोंने समझानेकी कोशिश की, 'सामने ही द्रुतगामी नौका है, स्वीकृति आक्टेवियसने अपने गुरु सिसेरोको रोम आनेका निमंत्रण देते हुए लिखा, 'रोमपर भयानक विपत्ति आयी दें, हम आपको सकुशल ग्रीस पहुँचा देंगे। ग्रीक है। बचपनसे ही आपके सिद्धान्तोंका कायल रहा हूँ। आपका स्वागतकर गौरवबोध करेंगे।' जनता मेरे साथ है, परन्तु धन और सेनाकी कमी है। यदि सिसेरोका उत्तर था, 'मृत्यू अवश्यम्भावी है, इस संकटकालमें आकर मेरी सहायता करेंगे तो जनतंत्रकी थोड़े दिन जीनेके लिये मातृभूमि छोड़कर नहीं जाना स्थापना सम्भव हो सकेगी।' चाहता। इसी मिट्टीमें पैदा हुआ, इसीमें मिल जानेपर मातृभूमिके प्रति अपने कर्तव्यपालनके लिये सिसेरो मेरी आत्माको शान्ति मिलेगी, मनुष्यका जन्म एक उद्देश्यसे होता है, उसकी पूर्ति ही जीवनकी सबसे रोम पहुँचा। बहुत वर्षों बाद आया था। बाल सफेद हो गए थे, दाँत गिर चुके थे, शरीर जर्जर हो गया था, फिर बड़ी उपलब्धि है। अब जीवनका मोह क्यों?' भी वाणीमें पहलेकी-सी ओजस्विता थी। उसकी सभाओंमें सूचना राजधानीमें पहुँची। सिसेरोके सिरके लाखोंकी संख्यामें रोमन नागरिक आने लगे। एण्टोनी, लिये बहुत बड़ा इनाम घोषित था। बीसियों सशस्त्र लेपिडिस और आक्टेवियस डर गए कि कहीं जनता सिपाही उसे बन्दी बनाने आये। उसके साथियोंने

दूसरे दिन उस महान विचारकको हत्याके लिये तीनों खुण्डहर । प्रियेक भौनिद्धार्थि टांदिया । "Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Sha

हुए—रोम, ब्रिटेन और स्पेन तथा अफ्रीकाके प्रदेश। राज्योंके संचालनके लिये विपुल धनकी आवश्यकता थी। तीनोंने अपने-अपने धनी मित्रोंके नाम बताये। उनको मारकर धन-संग्रहकी योजना बनी। इसके बाद ऐण्टोनीने कहा कि सुचारु रूपसे राज्य-संचालनके लिये सबसे बड़े बाधक होंगे बुद्धिजीवी, अतएव उन्हें भी अविलम्ब समाप्त कर देना चाहिये। ऐसे नामोंकी सूची बनी, पहला नाम था सिसेरोका।

आक्टेवियस इसपर अड गया। कहने लगा, 'जिसकी

सहायतासे मैं वर्तमान स्थितिपर पहुँच सका, जो मेरे लिये

पितृतुल्य हैं, उनकी हत्याके लिये मैं सहमति कैसे दे

सकता हूँ।' समझौता उस दिनके लिये रुक गया, किंतु

आखिर, एक दिन रोमके बाहर तीनोंकी एक गुप्त

बैठक हुई। सभी भयभीत थे। तय हुआ कि आपसमें

व्यर्थकी लड़ाई क्यों करें। रोमन साम्राज्यके तीन हिस्से

विद्रोह न कर बैठे।

सारगिर्भत उपदेशोंसे अभिभूत किया था।
सिसेरोका आत्मोत्सर्ग व्यर्थ नहीं गया, उसका
उद्देश्य 'जनतंत्र' जनमानसमें अमर हो गया। सम्राट् और
सामन्तोंकी भोगलिप्सा बढ़ती गयी। अत्याचार बढ़तेबढ़ते कुछ वर्षों बाद सम्राट् नीरोकी सनक और क्रूरतामें
साकार हो उठे। अबाध भोग-लिप्साका अगला कदम
पतनकी ओर बढ़ता है, वही हुआ। जनताके अन्दर
अधिनायकवादसे मुक्तिकी चिनगारीने ज्वालाका रूप

धारण किया, उसकी लपटमें नीरो भस्म हुआ। साम्राज्य

खण्ड-विखण्ड हो गया और साक्षी देनेके लिये बच गये

अपनी तलवारें निकाल लीं। 'सावधान! रक्तपात नहीं, बिलकुल नहीं' कहते हुए सिसेरोने आत्म-

गये। राजधानीके उसी चौकमें उन्हें सलीबपर टाँगा

गया, जहाँ उसने सैकड़ों बार लोगोंको अपने

सैनिक उसका सिर और हाथ काटकर रोम ले

समर्पण कर दिया।

[भाग ८९

मातृशक्ति गौ (श्रीविष्णुकान्तजी सारडा) हमारे सनातन धर्ममें शास्त्रोंका कथन है कि चक्षस आ सूर्य रोहयद्विव। वि गोभिरद्रिमैरयत्॥' पृथ्वीको धारण करनेकी शक्तियोंमें गोका प्रथम स्थान अर्थात् इन्द्रने 'दूरसे प्रकाश दीख पड़े—इसलिये सूर्यको द्युलोकमें स्थापित किया और स्वयं गौओंके साथ पहाडकी ओर विशेष रूपसे प्रस्थान किया।' गोभिर्विप्रैश्च वेदैश्च सतीभिः सत्यवादिभिः। पर्वत गोचरभूमि है। पर्वत गायोंका संरक्षण करनेवाला अलुब्धैर्दानशीलैश्च सप्तभिर्धार्यते है, इसीलिये पर्वतको गोत्र (गायोंको त्राण देनेवाला) अर्थात् गो, ब्राह्मण, वेद, सती, सत्यवादी, निर्लोभी और दानशील—इन सातने पृथ्वीको धारण कर रखा है। कहा गया है। जब पर्वत गौओंका संरक्षण करेगा तब

मातुशक्ति गौ

गोमाता पृथ्वीका आध्यात्मिक स्वरूप हैं, प्रत्यक्ष रूपसे भी पृथ्वीपर निवास करनेवाली सम्पूर्ण मानवजाति गोमाताके द्वारा जीवन और पोषण प्राप्त करती है। गायसे दूध, दही, घी, गोबर और गोमूत्र तो प्राप्त होता ही है, साथ ही उसके बछड़े ग्रामीण कृषिकी आज भी धुरी हैं। लघु और सीमान्त कृषकोंके लिये गो और गोवंशकी आज भी आधुनिक कृषि–उपकरणोंकी तुलनामें अधिक उपयोगिता

संख्या ५]

है। विडम्बना है कि मानवजातिके लिये जीवनस्वरूपा गो और अत्यन्त उपकारी गोवंश लगातार घटता जा रहा है। जिस देशमें परब्रह्म परमात्माने गोसेवाके लिये श्रीकृष्णरूपमें अवतार लिया हो, वहाँ प्रतिदिन हजारोंकी

संख्यामें नृशंसतापूर्वक गो और गोवंशका वध होना दुर्भाग्य नहीं तो और क्या है? अब प्रश्न उठता है कि—गोसेवा न होनेसे सुखकी प्राप्ति कैसे हो सकती है? गोवंश आज व्यावहारिक उपयोगिताकी दृष्टिसे भौतिक तुलापर तोला जा रहा है, किंतु आजका भौतिक विज्ञान गोवंशकी उस सूक्ष्मातिसूक्ष्म परमोत्कृष्ट उपयोगिताका पता नहीं लगा सकता, जिसे भारतीय शास्त्रकारोंने अपनी दिव्य दृष्टिसे पहले ही पता लगा लिया था। पहले प्रत्येक घरमें सदस्योंके भोजन

हवि:॥' रोमसमूहमें स्थित रहते हैं। इसलिये गोमाता सर्वदेवमयी

करनेसे पूर्व गोग्रास निकाला जाता था, गोग्रासदानका अनन्त फल है, परंतु दु:खकी बात है कि बदरीनाथ, केदारनाथधाम-जैसे पुण्य तीर्थमें गायें ही नहीं हैं। ऐसेमें वहाँ गोग्रासदानका सौभाग्य कहाँ? वहाँ गोद्ग्धके स्थानपर पाउडर दूधका प्रयोग होता है। ऋग्वेद (१।७।३)-में गौओंको चरनेके लिये

पहाडोंपर भेजनेका निर्देश किया गया है—'इन्द्रो दीर्घाय

गौओंके कारण निदयोंका महत्त्व बढ जाता है। ऋग्वेद (१।२३।१८)-में उन निदयोंकी स्तुति की गयी है, जहाँ वैदिक कालकी गौएँ जल पीती थीं—'अपो देवी रुपह्वये यत्र गावः पिबन्ति नः। सिन्धुभ्यः कर्त्वं अर्थात् हमारी गौएँ जहाँका जल पीती हैं, उन दिव्य गुणयुक्त जल-स्थानोंसे मैं प्रार्थना करता हूँ कि वे

समीप आ जायँ। उन निदयोंको मैं हिवर्भाग देता हूँ। गो जहाँका पानी पीती है, वहाँ दिव्य जल प्रवाहित होता है। गंगा आदि पवित्र निदयाँ गो-स्वरूपा ही हैं। गौओंके सिरपर ब्रह्माजीका निवास है, स्कन्धदेशपर भगवान् शिव विराजमान रहते हैं। पृष्ठभागपर भगवान् नारायण स्थित रहते हैं। चारों वेद गोके चारों चरणोंमें निवास करते हैं। शेष अन्य सभी देवगण गौओंके

साथ ही साथ जन-समुदायका संरक्षण होना स्वाभाविक

है, परंतु यह उत्तराखण्डका दुर्भाग्य रहा जो वहाँ गो

(गाय) नहीं थी, नहीं तो आज यह सर्वनाश न होता।

हैं। ऐसी इन गौओंकी सेवा-भक्तिसे भगवान् श्रीहरि प्रसन्न हो जाते हैं। गोको स्पर्श करनेसे सारे पापोंका हरण हो जाता है। जिस दिन विश्वमें गो नहीं रहेगी, उस दिन विश्व मातृशक्तिसे विहीन हो जायगा और उस दशामें कोई भी प्राणी नहीं बचेगा। इस प्रकार गोविहीन उत्तराखण्डमें तबाही होना कोई आश्चर्यकी बात नहीं है।

गौओंका समुदाय जहाँ बैठकर निर्भयतासे साँस लेता है, वह स्थान पवित्र हो जाता है। वहाँका सारा पाप नष्ट हो जाता है और वह स्थान चमक उठता है।

आचार्यश्री सत्य कहते थे लघुकथा-[को न कुसंगति पाइ नसाई] (श्रीसुभाषजी खन्ना)

वेदमन्त्रोंके सस्वर पाठसे प्रात: ब्राह्म-मुहूर्तकी वेलामें उसे उसने गुरुजीकी कुण्ठा समझा। वह अपने मित्रोंके

आश्रमका वातावरण गुंजायमान हो रहा था। आचार्यश्री अत्यन्त प्रसन्न थे। प्रसन्न क्यों न होते, उनका प्रिय शिष्य श्रीमुख जो आज पाठन करवा रहा था। आचार्यश्री शीघ्रातिशीघ्र अपने प्रिय शिष्यको समस्त विद्याओंमें पारंगत

कर देना चाहते थे। संसारमें केवल पिता और गुरु ही अपने पुत्र या शिष्यको अपनेसे आगे निकलता देखकर प्रसन्न होते हैं। गुरु या पिताका सदैव यह प्रयास रहता है कि मेरा बालक और अधिक तरक्की करे और संसारमें उसका नाम हो, लोग कहें कि देखो आचार्यश्रीका शिष्य उनसे भी अधिक स्पष्ट और सुन्दर उच्चारण कर रहा है, यही उनकी गुरुदक्षिणा या उनका पारितोषिक होता है।

आज आश्रमको सजाया जा रहा है, भण्डारेमें भी विशेष व्यंजन बन रहे हैं, आश्रममें चहल-पहल है। आज मन्त्रीजीका पुत्र रोहित आश्रममें दीक्षा लेने आ रहा है, साथमें राज्यके सब बड़े अधिकारी भी आज आश्रममें प्रसाद ग्रहण करेंगे, उत्सवका माहौल है।

अरे श्रीमुख! तुम तो आचार्यश्रीसे भी अधिक शुद्ध उच्चारण करते हो, तुम्हारा कक्षाका संचालन भी बहुत उत्तम है-रोहित श्रीमुखसे कह रहा था। दोनों मित्र जो हो गये थे। रोहित अक्सर श्रीमुखको अपने घरसे आये

आने लगा। इससे अब उसका पढ़ाईमें मन कम लगने लगा। उसका ऐसा व्यवहार देखकर आचार्यश्रीको बडा दु:ख हुआ, उन्होंने श्रीमुखको कई बार समझानेकी

उपहार देने लगा था। धीरे-धीरे श्रीमुख रोहितके प्रभावमें

कोशिश की, किंतु कुसंगका उसपर ऐसा प्रभाव पड़ा कि वह अपने पथसे विचलित होने लगा। ऐसे ही कुछ दिन

व्यतीत हो गये। आचार्यने पुनः श्रीमुखसे कहा— 'श्रीमुख! इधर मैं देख रहा हूँ तुम्हारा मन पढ़नेमें नहीं

है, तुम शान-शौकीनीमें ही समय बरबाद कर रहे हो, मेरी बात मानो अपने अध्ययनमें ध्यान दो।' उन्हें लग रहा था कि उनका प्रिय शिष्य अब कुसंगतिमें फँसता

जा रहा है। उन्होंने उसे समझानेका प्रयास किया, परंत्

साथ समय अधिक देने लगा। अवकाशके दिन तो वह रोहित तथा उसकी मित्र-मण्डलीके साथ आश्रमके

बाहर ही रहता। नियम-उपनियम सब धीरे-धीरे शिथिल हो रहे थे। रोहित अक्सर श्रीमुखसे कहता—देखो, गुरुजी तुम्हारा अध्ययन और कक्षसंचालन देखकर जलने लगे हैं। आचार्यश्री जो कभी श्रीमुखके पूज्य हुआ करते

थे, आज वह उन्हें अपना प्रतिद्वन्द्वी (कम्पटीटर) समझने लगा। उसे अपने आचार्यकी प्रत्येक बातमें उनका अभिमान नजर आने लगा।

अक्सर वह कभी आचार्यश्रीपर कटाक्ष भी कर देता, जो आचार्यजीको अन्दरतक घायल कर देता। अपने प्रिय शिष्यका आचरण, उसका व्यवहार देखकर वे सदैव प्रभुसे उसकी सद्बुद्धिके लिये प्रार्थना करते;

क्योंकि उनकी चिन्ताको, जो कि उसके भविष्यको लेकर थी, उसे वह उनका दर्प समझ रहा था। प्रिय वत्स, जीवनमें यदि अनुशासन न हो तो वह अनियमित हो जाता है, उस नदीकी तरह हो जाता है जिसका कोई तट न हो, इसलिये कुसंगतिसे बचो और

दुकानसे शराब पीकर निकलता है तो उसपर किसीकी दृष्टि नहीं जाती, परंतु शराबकी दुकानसे दुध पीकर निकलनेवालेको शराबी ही समझते हैं। इसे भी श्रीमुखने उनकी पराजय समझा कि वे अपने अभिमानके रक्षणको इस प्रकार कह रहे हैं।

रोहितके परामर्शसे श्रीमुख और अधिक व्यसनोंमें फँसता चला जा रहा था। धीरे-धीरे आचार्यश्री उदासीन हो गये और आश्रमकी बागडोर श्रीमुखके पास आने लगी।

अपने भविष्यपर अधिक ध्यान दो। व्यक्ति यदि दूधकी

धीरे-धीरे विद्यार्थी कम होने लगे और समयके अन्तरालपर आश्रम बन्द हो गया और श्रीमुख पूर्णरूपेण रोहितके आश्रयमें आ गया। धीरे-धीरे रोहितका व्यवहार बदलने लगा, उसने

एक दिन श्रीमुखसे कहा—भाई! हमारे परिवारवाले कहते हैं कि तुम्हें कुछ तो करना ही चाहिये।

भाग ८९

संख्या ५] संत उदबोधन अरे मरदूद! कहाँ मर गया तू, जरा-सा काम भी प्रिय था, जो भी उसके मुखमण्डलको देखता था, उसके तेरेसे नहीं होता। ढंगसे बर्तन भी नहीं धो सकता। आभामण्डलसे आकर्षित हुए बिना न रहता; किंतु आज रोहितकी धर्मपत्नी चिल्ला रही थी श्रीमुखपर। वह वही श्रीमुख कान्तिहीन, श्रीविहीन नि:सहाय पड़ा सोच श्रीमुख जो कभी वेदपाठी था, वह श्रीमुख जो सबका रहा था-आचार्यश्री सत्य कहते थे। संत उद्बोधन (ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीशरणानन्दजी महाराज) निवृत्ति होती है और उस अनन्तको सब जगह सबमें देखना साधक महानुभाव! सत्यकी लालसा किसी अभ्याससे जाग्रत् नहीं ही बोध है। योगसे दोष और कामनाओंका त्याग होता है होती। वह तो पानेका लालच और करनेकी रुचिका और उस अनन्तको अपना मानना एवं अहंको उनके समर्पित त्याग तथा गलत करना छोड़नेसे अपने-आप जाग्रत् करना ही प्रेम है, यानी प्रेमकी प्राप्ति होती है। केवल होती है। इसपर यदि कोई कहे कि ये सब कैसे छूटें? गृहत्याग करने एवं वस्त्र रॅंगनेमात्रसे किसीको योग-बोध-तो कहना होगा कि पहले हमें पानेका लालच छोडना प्रेमकी प्राप्ति नहीं हो सकती। यह त्याग नहीं वरन् त्यागके होगा। फिर करनेकी रुचि और गलत करना अपने-आप भेषमें अपने कर्तव्यसे पलायन करना है। जैसा कि 'रामायण' छूट जायगा, कारण, जो कुछ भी नहीं चाहता वह गलत में गोस्वामी तुलसीदासने लिखा है-किसलिये करेगा? और जो गलत नहीं करेगा, उसका नारि मुई गृह संपति नासी। मूड़ मुड़ाइ होहिं संन्यासी॥ करनेका राग भी मिट जायगा और उसको विश्राम भी कई भाई सती-साध्वी पत्नी और छोटे-छोटे मिलेगा। फिर सत्यकी लालसा जाग्रत् होगी। अबोध बालकोंको निराश्रित छोड़कर घर-बारका त्याग सही करनेसे विद्यमान रागकी निवृत्ति हो जाती है कर जाते हैं। पूछनेपर कहते हैं, उनका पालन तथा रक्षण और पानेके लालच तथा करनेकी रुचिके त्यागकी योग्यता भगवान् करेंगे। भी आ जाती है। जबतक हम गलत करते रहेंगे, तबतक न एक दृष्टिसे तो बात ठीक है कि सब जीवोंका तो हमारा राग ही मिटेगा और न हम करने-पानेके चक्रसे पालन और रक्षण तो भगवान् ही करते हैं; परंतु तुम तो मुक्त होंगे। इसलिये पहले सही करना सीखो और उसका अपने कर्तव्यसे च्युत हो गये। तुम्हारे ऊपर आश्रित उन भी फल मत चाहो। चाह-रहित होनेपर मनुष्यको योगकी प्राणियोंके प्रति भी तुम्हारा कुछ कर्तव्य था—इस बातका सिद्धि मिलती है; यानी शान्तिकी प्राप्ति होती है। तुमने विचार नहीं किया। ममता, कामना और तादात्म्यके त्यागका नाम ही यदि यही बात थी तो घर क्यों बसाया था ? यदि तुम संन्यास है। कपडे रँगना और किसी सम्प्रदाय-विशेषमें उनकी ममताको त्यागकर घरमें ही साथ रहते, उनको दीक्षा लेना तो संन्यासका बाहरी चिह्न है। केवल बाह्य-सदाचार और ईमानदार बनाते, उनको सही करना सिखाते। रक्षा तो तब भी उनकी भगवान् ही करते और तुम्हारा चिह्न धारण करनेसे किसीकी मुक्ति नहीं होती। करना-पाना छोड़नेपर ही बोधका उदय एवं मुक्तिकी कर्तव्य भी पूरा हो जाता। जब वह समर्थ हो जाते, तब प्राप्ति होती है; और प्रभुको अपना मानकर उनके शरणागत उनसे अलग रहकर अपना भजन करते। तुमने तो भगवान्पर होनेसे प्रेमकी प्राप्ति होती है। सही करना, कुछ न चाहना विश्वास किया, उनको साथ रखना झंझट समझकर अपने और प्रभुके शरणागत होना—यह योग, बोध प्रेमकी तैयारी आरामसे सुखपूर्वक रहनेके लिये उनको छोड़ दिया। किंतु है और इसीसे योग-बोध, प्रेमकी प्राप्ति होती है। अपने आराम और सुखको न छोड़ा। अब जब भजनमें मन नहीं लगता तो कहते हैं, क्या बतायें, हमने तो सब कुछका जगत्से सम्बन्ध टूटकर उस अनन्तके साथ अहंका त्याग कर दिया, परंतु सच्ची शान्ति नहीं मिली। सम्बन्ध जुड़ जानेका नाम ही योग है। इसीसे सब संकल्पोंकी

भावनाओंपर नियन्त्रण

(श्रीइन्द्रदेवजी सक्सेना)

प्रत्येक मनुष्य भावनाओंका समुच्चय होता है। विचार करनेमें मैं समय नष्ट नहीं करता। यदि किसीने

उसमें सद्भावनाएँ भी होती हैं और दुर्भावनाएँ भी, इन्हीं

हानि पहुँचायी है तो उसे भूलनेका प्रयास करे। उसपर

विचार करते रहनेसे मनोमालिन्य और कुढ़न बढ़ेगी।'

भावनाओंके द्वारा मनुष्यका जीवन उच्च या निम्न

लोभ एवं रागका त्यागकर संयमित जीवन जीनेकी

कोटिका बनता है। सद्भावनाएँ जहाँ व्यक्तिको जीवनकी

तथा न्यायोपार्जित द्रव्यकी सन्त-महात्मा और सद्ग्रन्थ

ऊँचाइयोंकी ओर ले जाती हैं, वहीं दुर्भावनाएँ उसे

पतनके गर्तकी ओर। इन्हीं सद्भावनाओं और दुर्भावनाओंको प्रशंसा करते हैं। लोभकी कभी पूर्ति हो नहीं सकती, वह

वैसे ही बढ़ता रहता है, जैसे घीकी आहुति देनेसे अग्निकी गीताके सोलहवें अध्यायमें भगवान् श्रीकृष्णने दैवी

सम्पद् और आसुरी सम्पद्के नामसे वर्णित किया है।

उन्होंने अभय, सत्त्वसंशुद्धि (अन्त:करणकी सम्यक्

शुद्धि), परमात्माके स्वरूपमें निरन्तर स्थित रहना,

सात्त्विक दान, इन्द्रियोंका दमन, भगवान् और गुरुजनोंकी

पूजा, स्वाध्याय, तप, अहिंसा, सत्य, अक्रोध, त्याग,

शान्ति, दया, अलोलुपता, वाणी और व्यवहारमें मृदुता,

क्षमा, धैर्य, किसीसे शत्रुभाव न रखना तथा अपनेमें

पूज्यताके अभिमानका अभाव आदिको दैवी-सम्पदायुक्त

पुरुषके लक्षण कहा है। साथ ही दम्भ, घमण्ड,

अभिमान, क्रोध, कठोरता और अज्ञानको उन्होंने आसूरी-सम्पदासे युक्त पुरुषके लक्षण कहा है।

दैवी-सम्पदा अर्थात् सद्भावना मनुष्यको संसार-

बन्धनसे मुक्त करनेवाली और आसुरी-सम्पदा अर्थात् दुर्भावना संसार-बन्धनमें फँसानेवाली होती है।

अब प्रश्न यह उठता है कि क्या हम अपनी

दुर्भावनाओंको अपने ऊपर हावी होने देते हैं ? इस प्रश्नका

जिस रूपमें उत्तर देंगे, उसका बड़ा प्रभाव हमारी सफलता-

असफलतापर पड़ेगा। यह बात सोलह आने सही है कि

क्रोध पतनका मार्ग प्रशस्त करता है। यही बात काम और लोभके लिये भी सत्य है। वास्तवमें काम, क्रोध तथा

लोभकी भावना तो आत्माका नाश करनेवाली ही है।

जीवनसे अधिकतम लाभ उठानेके लिये आवश्यक है कि ऐसी आदतों और आचार-व्यवहारोंका हम

परित्याग कर दें, जो हमें नीचे खींच रही हैं। शिकायतों और पुराने मनोमालिन्यका पोषणकर प्रसन्न

नहीं रहा जा सकता। ऐसी स्थितिमें आइजन हावरका

आपसे जो हो सके करें और उस समस्याको ही मनसे निकाल दें। आदमी अनेक ऐसी स्थितियोंके प्रति चिन्तातुर

ज्वाला। अत: लोभकी भावना पतनकी ओर ही ले जानेवाली है। कामको पुरुषार्थ-चतुष्टयमें स्थान प्राप्त है, परंतु वही

काम प्रशस्त माना गया है, जो धर्मनियन्त्रित हो। काम-

भावनाओंका उच्छृंखल स्वरूप अधोगतिका द्वार है। अत:

मनुष्यको काम, क्रोध, लोभ, द्वेष आदि दुर्भावनाओंका

सर्वथा परित्यागकर अपने मनको सद्विचारोंसे संवलित करना चाहिये। सद्भावनाओंका आश्रय लेना चाहिये और निश्चिन्त

होकर अपने सत्-पथपर बढ़ते रहना चाहिये, चिन्ताएँ हमें

समाप्त करें, उससे पूर्व हम उन्हें समाप्त कर डालें। चिन्ता

किसी समस्याका हल नहीं कर सकती। यदि आपके सम्मुख कोई समस्या है तो उसे हल करनेके सम्बन्धमें

होता है, जो जीवनमें कभी घटती ही नहीं हैं। जीवनमें निराशासे मुक्त रहनेका प्रयास करें। सकारात्मक और सुखद

विचारोंको मनमें स्थान दें। विनोदप्रियता आपमें है, तो आप

लम्बे समयतक मुर्दामन नहीं रह सकते हैं। अपनेको सम्भावनाओंके अनुरूप स्वीकार करें और अपनेमें

आत्मविश्वास पैदा करें।

वर्तमानकी अवहेलनाकर कोई व्यक्ति सफलता

प्राप्त नहीं कर सकता है। यह सार्वभौम रूपसे सत्य है

कि भावनात्मक रूपसे मनुष्य प्रसन्नताका आकांक्षी होता

है। अत: यदि आप उपर्युक्त प्रकारसे आचरण करें तो

निश्चित रूपसे अपनी भावनाओंको नियन्त्रणमें रखकर

अपने जीवनको सुखमय बनानेमें सफल रहेंगे, संत-

महात्माओंके उपदेश और सद्ग्रन्थोंका अध्ययन इसमें कथाति वैपत्ति भंगो तर्राक्ष संक्रें अपिस नासहे हैं // बडि हें कुछुरे पें ha नह सक् लो A कि हिप्पा है। HOVE BY Avinash/Sha

िभाग ८९

मुल, भद्रा, पंचक तथा व्रत-पर्वादि

भद्रा दिनमें ७। २२ बजेसे सायं ६। ४४ बजेतक, मकरराशि रात्रिमें

१।१४ बजेसे, संकष्टी श्रीगणेशचतुर्थीव्रत, चन्द्रोदय रात्रिमें ९।९ बजे।

कुम्भराशि रात्रिशेष ४।४० बजेसे, पंचकारम्भ रात्रिशेष ४।४० बजे।

भद्रा दिनमें १२।५१ बजेसे रात्रिमें ११।४० बजेतक, मृगशिराका सूर्य

भद्रा दिनमें ४। २० बजेसे रात्रिमें ३। ८ बजेतक, मूल दिनमें ११। १

मेषराशि दिनमें ९।२७ बजेसे, योगिनी एकादशीव्रत (सबका), पंचक

भद्रा रात्रिमें ९।९ बजेसे, वृषराशि दिनमें १२।४५ बजेसे, प्रदोषव्रत।

भद्रा दिनमें ८। २९ बजेतक, मिथुन संक्रान्ति रात्रिमें ११। ३७ बजे।

मूल, भद्रा, पंचक तथा व्रत-पर्वादि

भद्रा दिनमें ७। ४२ बजेसे रात्रिमें ८। १३ बजेतक, वैनायकी

भद्रा रात्रिमें १। ३३ बजेसे, कन्याराशि रात्रिमें १०। २२ बजेसे।

भद्रा दिनमें ८। ५ बजेतक, **वृश्चिकराशि** रात्रिमें ८। १० बजेसे,

भद्रा दिनमें ८। ३४ बजेसे रात्रिमें ८। ९ बजेतक, व्रत-पूर्णिमा,

मिथुनराशि सायं ५। ४५ बजेसे, भौमवती अमावस्या।

मीनराशि दिनमें ७।५ बजेसे, श्रीशीतलाष्टमी।

धनुराशि रात्रिमें ८। ९ बजेतक।

मूल रात्रिमें ८। २ बजेतक।

रात्रिमें ११। २२ बजे।

समाप्त दिनमें ९। २७ बजे। मुल दिनमें ८। ४ बजेतक।

अधिकमास प्रारम्भ।

कर्कराशि रात्रिमें १।५ बजेसे।

भद्रा दिनमें २। ३३ बजेतक।

तुलाराशि दिनमें १०।० बजेसे।

पुरुषोत्तमी एकादशीव्रत (सबका)। सोमप्रदोषव्रत, मूल रात्रिमें ३। ३१ बजेसे।

धनुराशि रात्रिमें ३।५९ बजेसे।

मुल रात्रिमें ३। ३८ बजेतक।

भद्रा रात्रिमें ७। ३२ बजेसे।

कालाष्टमी।

बजेसे।

वतोत्पव-पर्व

व्रतोत्सव-पर्व

३ जून

8 "

٤ ,,

ξ,,,

9 ,,

6 11

۹ ,,

११ ,,

१३ ,,

१४ "

१५ ,,

१६ ,,

दिनांक

१८ ,,

१९ ,,

२० ,,

,,

सं० २०७२, शक १९३७, सन् २०१५, सूर्य उत्तरायण, ग्रीष्म-ऋतु, शुद्ध आषाढ़ कृष्णपक्ष तिथि वार नक्षत्र दिनांक

प्रतिपदा रात्रिमें ८।५५ बजेतक ज्येष्ठा रात्रिमें ८। ९ बजेतक बुध

द्वितीया "८। १ बजेतक गुरु मूल 😗 ८। २ बजेतक शुक्र

पु० षा० 🗤 ७। २७ बजेतक

तृतीया सायं ६।४४ बजेतक

संख्या ५]

चतुर्थी दिनमें ५।४ बजेतक | शनि | उ० षा० सायं ६।३५ बजेतक पंचमी 🦙 ३। ४ बजेतक रवि श्रवण

🗤 ५। २२ बजेतक षष्ठी 🦙 १२।५१ बजेतक सोम

धनिष्ठा दिनमें ३।५६ बजेतक

सप्तमी "१०। २८ बजेतक मिंगल शतिभषा "१२। २० बजेतक

पु० भा० ११ १२।४० बजेतक १०

उ० भा० ११।१ बजेतक गुरु

अष्टमी "८।१ बजेतक बुध नवमी प्रात: ५।३२ बजेतक

दशमी रात्रिमें ३।८ बजेतक

एकादशी रात्रिमें १२।५३ बजेतक रेवती 🗤 ९। २७ बजेतक शुक्र १२ ,,

द्वादशी ग१०।५१ बजेतक शनि अश्विनी 🗤 ८। ४ बजेतक रवि भरणी प्रात: ६।५६ बजेतक

त्रयोदशी ग९। ९ बजेतक चतुर्दशी ,, ७।४९ बजेतक सोम कृत्तिका 🗤 ६। १० बजेतक अमावस्या सायं ६ ।५४ बजेतक मंगल रोहणी 😗 ५। ४४ बजेतक

सं० २०७२, शक १९३७, सन् २०१५, सूर्य उत्तरायण, ग्रीष्म-ऋतु, अधिक आषाढ़ शुक्लपक्ष

तिथि वार नक्षत्र

मृगशिरा प्रातः ५। ४७ बजेतक १७ जून प्रतिपदा सायं ६। २८ बजेतक बुध

🗤 ६ । १८ बजेतक द्वितीया '' ६। ३३) बजेतक गुरु आर्द्रा तृतीया रात्रिमें ७। १० बजेतक | शुक्र

पुनर्वसु दिनमें ७। २० बजेतक पुष्य "८।५२ बजेतक चतुर्थी 😗 ८।१३ बजेतक शनि

पंचमी '' ९। ४४ बजेतक रिव आश्लेषा '' १०।५१ बजेतक

ग १। ९ बजेतक मघा

षष्ठी 😗 ११। ३३ बजेतक सोम पु० फा० ११ ३। ४२ बजेतक

हस्त रात्रिमें ८।५२ बजेतक

नवमी अहोरात्र गुरु नवमी प्रात: ५। २५ बजेतक शुक्र

विशाखा 🗤 २ । ३३ बजेतक

मल

सप्तमी 🗤 १।३३ बजेतक मंगल अष्टमी 🗤 ३। ३४ बजेतक बुध

दशमी गग्६।५९ बजेतक शिनि

चित्रा '' ११। ९ बजेतक स्वाती 🗤 १। ३ बजेतक

एकादशी दिनमें ८। ५ बजेतक रिव

द्वादशी 😗 ८। ४८ बजेतक सोम 🛭

त्रयोदशी 🗤 ८ । ५७ बजेतक 🗗 मंगल

चतुर्दशी 🗤 ८। ३४ बजेतक बुध

पूर्णिमा ''७। ४३ बजेतक गुरु

उ० फा० सायं ६।२० बजेतक

अनुराधा 🕶 ३ । ३१ बजेतक

ज्येष्ठा ११३।५९ बजेतक

पू० षा० ११ ३। ३० बजेतक

🗤 ३।५८ बजेतक

२२

23 ,,

२४ ,,

२५ ,,

२६ ,,

२७ "

२८

२९ ,,

30

१ जुलाई

पूर्णिमा ।

,,

२१ ,,

श्रीगणेशचतुर्थीवृत, मूल दिनमे ८। ५२ बजेसे। सिंहराशि दिनमें १०।५१ बजेसे। आर्द्राका सूर्य रात्रिमें १२।९ बजे, सायन कर्कका सूर्य प्रात: ५।५१

बजे, **मृल** दिनमें १।९ बजेतक।

साधनोपयोगी पत्र बदलनेका मनोरथ न उठे। यहाँपर जन्म-मृत्यु, सुख-(१) रामसे ममता, संसारमें समता दु:ख, हानि-लाभ होता ही रहेगा। यह संसारका प्रिय भैया! सप्रेम हरिस्मरण। तुम्हारा पत्र मिला। स्वरूप है। संसार रहता है द्वन्द्वके स्वरूपमें। बस, मनुष्य जानता बहुत है, जानना चाहता बहुत है; पर भगवान्से तो केवल यह माँग की जाय कि जो होना करना बहुत कम चाहता है; इसीलिये जानी हुई और है, सो होने दो। उसे कभी भी बदलनेकी आवश्यकता जाननेयोग्य बातोंसे उसे विशेष लाभ नहीं होता। बहुत नहीं। बस, केवल तुम्हारा चिन्तन बना रहे। अधिक बातें जाननेसे बातें याद भी नहीं रहतीं। तुमने गोस्वामीजीका एक दोहा याद रखना-अपने लम्बे पत्रमें जो बातें पूछी हैं, उन सबका यह तुलसी ममता राम सों, समता सब संसार। बहुत थोड़ेमें ही उत्तर है कि तुम्हें जो कुछ प्राप्त है, राग न रोष, न दोष दुःख, दास भये भव पार॥ वह न तुम्हारा है और न तुम्हारे लिये है, इस बातका

(२) रास्तेमें न भटकें, न अटकें प्रिय महोदय! सादर हरिस्मरण। आपका कृपापत्र

भाग ८९

मिला। उत्तरमें निवेदन है कि हमें चाहिये कि हम

अपनेको यहाँके मालिक तो समझें ही नहीं, यात्री समझें। हमारी महायात्रा चल रही है और जबतक हम अपने

घर—श्रीभगवान्के चरण-प्रान्तमें नहीं पहुँच जायँगे, तबतक यह यात्रा चलती ही रहेगी। दु:ख तो इस बातका

है कि हम भूलकर भटक जाते हैं एवं रास्तेमें ही कहीं ममता-आसक्ति करके तथा कहीं लड़-झगड़कर मुकदमेमें फँसकर अटक जाते हैं। हमारी यात्रा ठीक सीधे रास्ते— लक्ष्यकी ओर चलती ही नहीं। इसीसे एकके बाद दूसरा

दु:ख आता रहता है; क्योंकि ये राग-द्वेष सदा नये-नये

आसक्ति—ममता न करें और न किसी से लड़ें-झगड़ें।

बन्धनों तथा भयोंको उत्पन्न करते रहते हैं। अतएव न देनेका अभिमान। जगत्में सबसे बड़ा बन्धन 'ममता' बुद्धिमानी इसीमें है कि हम अपने लक्ष्यको ध्यानमें रखें, यहाँके घरको घर न समझें—मुसाफिरखाना समझें, कहीं

> भगवान्की ओर मुख किये सीधे चुपचाप चलें और रास्ता तय करें। लक्ष्यपर दृष्टि रखें; इधर-उधर न भटकना, न कहीं अटकना। भगवद्विश्वास होगा, तो हमारा रास्ता शीघ्र समाप्त हो जायगा, हम शीघ्र

> > भगवद्धाममें पहुँच जायँगे। शेष भगवत्कृपा।

है। इसीसे पापोंकी उत्पत्ति होती है और ममतासे ही दु:ख होते हैं। कितने लोग रोज मरते हैं और कितनोंका दिवाला निकलता है—हम कहाँ दुखी होते हैं! जहाँ ममता है, वहीं दु:ख है। ममता ऐसी वस्तुसे करनी चाहिये, जो अपनी है, सदा रहनेवाली है तथा किसी भी देश-काल-योनियोंमें जो अपनेसे अलग नहीं होती। वह वस्तु है-श्रीभगवान्! जगत्में जो कुछ हो रहा

है, होने दिया जाय; उसके परिवर्तन करनेका या

निश्चय कर लो। जो कुछ मिला है, उसे प्रभुके लिये

समझो। धन, जन, सेवा, मान, बुद्धि, विद्या, इन्द्रिय

इत्यादि सबकुछ उनकी चीज मानकर ईमानदारी और

सच्चाईके साथ बिना अभिमान, नम्रताके साथ उनके

आज्ञानुसार उन्हींको अर्पण करते रहो। यह अपना सौभाग्य समझो कि भगवान्ने इसमें तुमको निमित्त

बनाया। भगवान्को देनेके लिये अमुक परिमाणमें कोई

वस्तु हो-यह बात नहीं है। किसीके पास धन नहीं

होगा तो वह उसे कैसे देगा! किसीके पास विद्या नहीं

है तो वह विद्या कहाँसे देगा! जो कुछ है उसमेंसे

अपनेपनको उठा लेना और उनका मान लेना—यही

देना है। इसके बाद न उसे रखनेका लोभ होगा और

साधनोपयोगी पत्र संख्या ५] विष्णु, भगवान् श्रीकृष्ण, भगवान् श्रीराम (चारो बन्धु), (3) भगवान् शंकर, भगवती दुर्गा आदिके अवतारोंका उल्लेख माता-पिताके आज्ञानुसार करना चाहिये प्रिय बहन! सप्रेम हरिस्मरण। आपका कृपापत्र रहता है। इन सबके एक-एकसे कई जगह कई अवतार मिला। आप भगवानुके नामकी पचीस मालाएँ सुबह, होनेकी बात लिखी रहती है और प्राय: सभी उनके पचीस मालाएँ शामको जप करती हैं, कुछ ध्यान-पूर्णावतारका दावा करते हैं। बात ठीक समझमें नहीं सेवा आदि भी करती हैं, खान-पान, घूमने-फिरनेका आती—एक ही विष्णुभगवान्के, एक ही श्रीकृष्ण या आपका कोई भी व्यसन या शौक नहीं है, न धनका श्रीरामके अलग-अलग कई जगह अवतार कैसे हो ही प्रलोभन है—ये सभी बातें बहुत अच्छी हैं। आपके गये ? भगवान् सर्वशक्तिमान् हैं; वे सब कुछ कर सकते माता-पिता खुब भजन करते हैं, घर भी अच्छा है, हैं, पर जबतक बात समझमें न आ जाय, तबतक कुछ किसी प्रकारकी त्रुटि नहीं है—यह सब भगवत्कृपाका भी कहते नहीं बनता। हाँ, इतनी बात अवश्य कही जा ही फल है। ऐसे भक्त माता-पिता आपके लिये जो सकती है कि जहाँ भगवान् या अवतारके नामपर अपनी पूजा-प्रतिष्ठा करानेका प्रयत्न है, धन-सम्मानकी माँग सोचेंगे—सब ठीक सोचेंगे। वे आपके स्वास्थ्यकी हालत भी जानते हैं तथा आपकी भजनमें प्रवृत्ति है, है, वहाँ अवश्य सावधान हो जाना चाहिये। यों तो इससे भी परिचित हैं। उनसे बढ़कर आपका हितैषी भगवानुका कभी कहीं न अभाव है, न हो सकता है। जीवमात्रके रूपमें भगवान् ही अवतरित और अभिव्यक्त कौन होगा! आपके सम्बन्धमें वे सोच-विचारकर जो निश्चय करें, आपको वही करना चाहिये। हैं। अतः सदा-सर्वत्र भगवान्को मानकर शास्त्रके सदा-सर्वदा भगवानुको अपना समझिये। सचमुच आज्ञानुसार भगवानुका भजन-पूजन-ध्यान-सेवन अवश्य वे हमारे अपने-से-अपने हैं। उनकी कृपापर विश्वास करना चाहिये। किसीका भी विरोध नहीं करना चाहिये। कीजिये। उनके मंगलमय विधानसे सब मंगल ही शास्त्रोक्त उचित बात सभीकी अच्छी है, अशास्त्रीय होगा। शेष प्रभुकृपा। यथेच्छाचार तथा केवल भोगलिप्साकी बात सदा ही बुरी है और त्याज्य है। शेष भगवत्कृपा। (8) भगवान्के अवतार (4) धर्मपत्नीके साथ सद्व्यवहार

प्रिय महोदय! सप्रेम हरिस्मरण। आपका कृपापत्र

मिला। उत्तरमें निवेदन है कि सचमुच भगवान्का कहीं

अवतार हो गया हो या होनेवाला हो तथा शीघ्र ही

विश्वमें अधर्मका नाश एवं धर्मका संस्थापन होनेवाला

हो तो इससे बढ़कर आनन्दकी बात और क्या हो सकती है ? पर जहाँतक हमलोगोंकी बुद्धि काम देती है,

जहाँतक शास्त्रोंके वचन मिलते हैं, यह कहा जा सकता है कि अभी वस्तुत: सच्चिदानन्दघन भगवान्का अवतार

आये हैं — आते हैं, जिनमें साक्षात् परब्रह्म, भगवान्

कहीं नहीं हुआ है। यों तो हमारे पास ऐसे बहुत-से पत्र

सर्वथा निर्दोष बतला रही है, तब तो उन्हें दोषी मानकर त्याग करनेका विचार भी करना बड़ा पाप है।

उसका पूरा पता लगाये बिना किसीको दोषी मान लेना अनुचित है। फिर जब आपकी धर्मपत्नी अपनेको

प्रिय महोदय! सप्रेम हरिस्मरण। आपका पत्र

मिला। सुनी हुई बात तो दूर, आँखसे देखनेपर भी

आप ऐसा पाप कभी न करें। उन्हें सद्भाव दें, स्नेह दें, आदर दें और अपने सद्व्यवहारसे सुखी रखें— ईश्वर आपका भला करेंगे। शेष भगवत्कृपा।

कृपानुभूति

भगवत्कृपासे अर्थाभावमें भी ऑपरेशन हुआ

ग्वालियर (म०प्र०)-के करीब एक छोटा-सा कस्बा

है बामोर, वहीं मेरा जन्म हुआ था। बचपनसे ही रामायण और कल्याण—ये दोनों पुस्तकें पढ़नेका अच्छा वातावरण

वहाँ मिला। आये दिन कॉलोनीमें किसी-न-किसीके यहाँ अखण्ड रामायणका पाठ हुआ करता था, हम घरके सभी सदस्य अक्सर वहाँ जाया करते थे। इस कारण मेरी रामायण

ग्रन्थ और श्रीरामजीके ऊपर बडी श्रद्धा है। हमारे घर मासिक कल्याण आता था, जिसे हम पढते थे, उसमें

आखिरके तीन-चार पेजपर भक्तोंके अनुभव दिये जाते थे, वह कालम मैं अक्सर पढ़ता था, उसी तरहका एक किस्सा

मेरे साथ भी हुआ, जिसका मैं यहाँ जिक्र कर रहा हूँ— में गुजरातके राजकोट शहरमें एक प्राइवेट कम्पनीमें नौकरी कर रहा था, किन्हीं कारणोंवश वह कम्पनी बन्द

होने जा रही है-ऐसा समाचार मिला। उन दिनों मेरी तिबयत ठीक नहीं थी। उच्च रक्तचाप एवं मधुमेह मेरी बीमारी थी, सब कुछ नार्मल चल रहा था, एक दिन

समाचार मिला कि ३० नवम्बर, सन् २०१२ ई० से कम्पनीका कामकाज बन्द हो जायगा। कम्पनीने छँटनी चालू कर दी, हमलोगोंका भी नम्बर आता, उसके पहले मुझे २९-३० दिसम्बरको जबरदस्त चक्कर आया। डॉक्टरको

दिखाया, डॉक्टरने कहा कि Angiography (एंजियोग्रॉफी) करवानी पड़ेगी, हार्टकी Problem लगती है। कम्पनीमें मेरा ESIC कटता था, उस वजहसे ESIC

ने मुझे बड़े अच्छे हॉस्पिटलमें Refer किया। ईश्वरकी कृपासे ५ जनवरीको मेरा Engioplasty का ऑपरेशन हुआ,

करीब २.२५ लाखका खर्चा था, पर मुझे एक पैसा भी खर्च नहीं करना पड़ा; क्योंकि उस वक्ततक मैं ESIC में कवर था। २०-२५ दिनके बाद कम्पनी Join की। ५वें दिन यानी १ फरवरीसे मेरा हिसाब कर दिया गया और मैं

घरपर बैठ गया। ३-४ महीने ही हुए थे कि मुझे फिरसे

था, मुझे बहुत तनाव आ गया था, साधारण परिवारसे था। बड़ी मुश्किलसे घरका गुजारा चलता था, किसी प्रकारकी बचत होती नहीं थी। नौकरी चली गयी थी, इसलिये जो

वगैरह कुछ था नहीं। इस कारण चिन्ता ज्यादा होने लगी थी कि अगर कुछ समस्या निकली तो फिर दो-ढाई लाख रुपये कहाँसे लायेंगे। रामजीको याद किया और डॉक्टर के पास गया। डॉक्टर ने औपचारिक जॉॅंचके बाद बताया

कि अभी जो पहले Operation किया गया था, वह Success नहीं हुआ है। उन्होंने मुझे बताया कि अब आपकी Open Heart Surgery होगी। मैं डॉक्टर के सामने ही

फफक-फफककर रो पड़ा; मैंने उनसे कहा कि मेरे पास तो फूटी-कौड़ी भी नहीं है। पहले तो ESIC की वजहसे Operation हो गया, अब क्या होगा? डॉक्टर ने मुझे धीरज दिया और बोले—'चिन्ता छोड़ो, कुछ प्रयत्न करते

हैं। सब ठीक हो जायगा।' अगले दिन डॉक्टर ने मुझे जरूरी चेकअपके लिये बुलाया और Operation करनेके लिये भर्ती होनेको कहा और बताया कि आप निश्चिन्त

रहें। आपको मामूली खर्च आयेगा, बाकी हमारी जिम्मेदारी रहेगी। ढाई लाखकी जगह मुझे मात्र २०००० रुपयेका खर्चा आया और मेरा पुन: ऑपरेशन हुआ। मैं कभी-

दूसरी नौकरी छोटी-मोटी लगी थी, उसमें ESIC का लाभ

कभी यह सोचता हूँ कि यह एक चमत्कार ही था, अगर २-३ दिन बाद यह सब कुछ होता तो शायद यह सब सम्भव नहीं होता; क्योंकि मैनेजमेंटने १ जनवरी, सन् २०१३ ई० से हमलोगोंको निकालनेकी तैयारी कर ली थी। २९-

३० दिसम्बर, सन् २०१२ ई० को यह सब कुछ हुआ, इसलिये यह सब हो पाया। इस सबके लिये मैं ईश्वरको लाख-लाख धन्यवाद देता हूँ और अन्तमें यही कहता हूँ 'जिसका कोई नहीं उसका तो खुदा है यारो' रामजीने मेरी

लाज रख ली, नहीं, तो कहींका नहीं रहता। पंभापिखोडोक्षाक्रींअप Serर्स्स्मिभीकेड्रीं/वेडर.पुकुर्खाharma | MADE WITH LOVE करणे व्याप्त श्रेतिक केरिका

पढो, समझो और करो संख्या ५] पढ़ो, समझो और करो आनन्दसे बीतता गया। (१) करके तो देखें माता-पिता-प्रभुकी सेवा मैंने बचपनसे वही किया, जो माता-पिताको सज्जनो! मेरा यह अनुभव है कि यदि सच्चे मनसे भाया। उन्होंने कहा—आज कुछ काम है, स्कूल मत सन्तों-भगवद्भक्तोंमें श्रद्धा एवं सेवाभाव हो जाय तो जाओ तो नहीं गया। देखा पिता थके हैं तो उनके पैर जीवन-यापनमें आर्थिक बदहाली आड़े नहीं आती, दबाना, छोटे भाइयोंको देखना, गायोंका चारा लाना, चरनेके लिये छोड़ना, शामको माँके साथ बँधवाना, गेहूँ ईश्वर किसी-न-किसी रूपमें उसे कदम-कदमपर सहारा देते हैं। इसी परिप्रेक्ष्यमें संक्षिप्तमें अपने जीवनकी यादें पिसाना आदि जो-जो वे कहते, करता था। ध्यान रखता कि ऐसा काम न हो जाय कि गाँवके लोग माता-प्रकट करता हूँ—मेरा जन्म टिकरिया, जिला जबलपुर (म०प्र०)-में हुआ। घरके सामने शिवमन्दिर, कुआँ एवं पिताको उलाहना दें। माता-पिताकी सेवा कैसे की जाती बगीचा है। उन दिनों शिवमन्दिरके सामने आमकी है मैं नहीं जानता था, बस उनके मनकी करता था। शीतल छायामें सन्त-महात्माओंकी मण्डली आकर फरवरी, सन् १९८० ई० में मेरी शादी हुई। मैं उस समय ठहरती थी। पाँच वर्षकी उम्रसे मैं उस सन्त-समागमके ऑडीटरके पदपर नौकरी कर रहा था। स्थान एवं वहाँ होनेवाली उनकी दिनचर्याके दर्शन करता ईश्वरकी कृपासे मुझे अति सुलक्षणा गृहकार्यमें था। रात्रिके समय संतजन अपने चिमटोंकी धुनपर बड़े दक्ष आज्ञाकारी पत्नी मिली। आधुनिक भौतिकवादी ही भावविभोर होकर ईश-भजन गाया करते थे। मैं तब युगमें मैंने माता-पिताके साथ मिलकर घरको सँवारनेके कुछ समझनेमें तो असमर्थ था, पर ऐसा लगता था कि जो कार्य किये, उसमें मेरी पत्नीका विशेष योगदान में भी उनकी भक्तिरस-तरंगोंमें झुल रहा हूँ। उन्हीं दिनों रहा, नहीं तो चाहकर भी अकेला अपने माता-पिता, चित्रकूटधामकी यात्रापर मैं अपने पिताके साथ गया। भाई-बहनके लिये इतना इतनी सहजतासे मैं नहीं कर वहाँसे लौटनेपर मुझे रामायणके दोहा-चौपाइयाँ पढ़ने पाता । एवं गानेकी रुचि जागी। मैं बड़े चावसे रामायण पढ़ता, बचपनसे ही मुझे जो भी पारिश्रमिक मिलता, सब माता-पिताको समर्पित करता था। स्कूल-कॉलेजमें गाँवभरमें होनेवाले हर रामायण-कार्यक्रममें मुझे बुलाया जाता था। बड़े-बुर्जुग बड़े प्रेमसे मेरे रामायण-गायनको मिलनेवाली छात्रवृत्ति या पुरस्कार भी उन्हींको देता, फिर सुनते थे। जो वे कहते, वही होता। विवाहके बाद भी यह क्रम बना रहा। मैं मासिक वेतन माँके हाथमें सौंपता था। जब दस वर्षकी उम्रसे मैं अपने माता-पिताके साथ गृहकार्य एवं मजदूरीमें उनका हाथ बँटाने लगा। स्कूलके मैं पत्नीको लेकर जबलपुर रहने आया तो वेतनकी तारीखके एक दिन पहले या उसी दिन पिता या माताको साथ छोटे भाइयोंकी सँभाल करता था। समयपर धान-गेहूँकी कटाईके साथ चावसे पढ़ाई भी करता था। घरकी बुला लेता था। वेतन लेकर ऑफिससे आकर पिताके तंगहालीके कारण मैट्रिकतक कठिनाईसे पहुँचा। मैंने हाथमें देता। उनके कहनेपर भगवान्के चरणोंमें रखता।

दूसरे दिन गाँव लौटते समय पिताजी अपने हाथसे

वेतनमेंसे हम दोनों एवं बच्चोंके मासिक खर्चके लिये रुपये देते, बाकी घरका खर्च चलानेहेतु गाँव ले जाते थे।

पिताजीसे सुबह-शाम काम करके स्कूल जानेकी प्रार्थना

की। मैट्रिक पास किया, मेरे अन्य भाई आगे नहीं पढ़

सके। मैं कॉलेजमें दाखिल हुआ, गुरुकृपासे मेरा जीवन

भाग ८९ कल्याण यह क्रम उनके रहनेतक चलता रहा। यह सब पत्नीके आशीर्वाद भी लगता है।—घनश्यामशरण श्रीवास्तव सामने होता था। उसने कभी इसमें न हस्तक्षेप किया, (3) न ही विरोधी भाव प्रकट किये। पूज्य माता-पिता सन् हार्ट अटैकका उपचार १९९६-१९९८ ई० के अन्तरालमें परमधाम सिधार चुके आधुनिक जीवन-शैली, भाग-दौड और मानसिक तनावके कारण हार्ट अटैक (हृदयाघात) आम होता जा हैं, लेकिन उन्हींके आशीर्वादसे आज मैं अपनी पत्नी एवं चार संतानों तथा नाती-पोतोंके साथ सानन्द जीवनयापन रहा है। यह एक सद्यः प्राणघातक रोग है, इसमें रक्त कर रहा हूँ। मैं प्रत्यक्ष देख रहा हूँ कि यह रामायण-धमनियोंमें ब्लॉकेज हो जाता है। ऐसेमें सहज सुलभ यह पाठका सुफल तथा माता-पिता एवं गुरुका ही आशीर्वाद उपाय ९९ प्रतिशत ब्लॉकेजको भी रिमूव कर देता है। है, इसे आप सेवा या जो भी कहें। इसका मुख्य घटक है-पीपलका पत्ता। औषधि-निर्माण और प्रयोगविधि इस प्रकार है— —मथुराप्रसाद कोरी पीपलके १५ पत्ते लें, जो कोमल गुलाबी कोपलें (२) न हों, बल्कि पत्ते हरे, कोमल एवं भली प्रकारसे शाप या वरदान विकसित हों। प्रत्येकका ऊपर एवं नीचेका कुछ भाग बात माह जुलाई, सन् २०१३ ई० की है, मैं कैंचीसे काटकर अलग कर दें। झाँसीसे उरई बससे जा रहा था। बसमें बैठा एक व्यक्ति दाढी रखाये हुए था। वह चिरगाँवसे बसमें पत्तेका बीचका भाग पानीसे साफ कर लें। इन्हें एक गिलास पानीमें धीमी आँचपर पकने दें। जब पानी उबलकर बैठा, कण्डक्टरने उसका टिकट बनाया, उससे रुपये लिये, परंतु वापसके लिये फुटकर रुपये शायद नहीं एक तिहाई रह जाय, तब ठण्डा होनेपर साफ कपड़ेसे थे, कण्डक्टरने दो रुपये टिकटके पीछे लिखकर टिकट छान लें और उसे ठण्डे स्थानपर रख दें, दवा तैयार। सवारीको दिया और कहा—'जहाँ उतरना, वहाँ ले इस काढेकी तीन खुराकें बनाकर प्रत्येक तीन घण्टे बाद लेना।' ऐसी ही क्रिया वह अधिकतर सवारियोंके प्रात: से लें। हार्ट अटैकके बाद कुछ समय हो जानेके पश्चात् साथ कर रहा था। जब दाढीवाला व्यक्ति सेमरी लगातार पन्द्रह दिनतक इसे लेनेसे हृदय पुन: स्वस्थ हो जाता है और फिर दिलका दौरा पड़नेकी सम्भावना नहीं रहती। गाँवमें उतरा तो कण्डक्टरसे उसने दो रुपये माँगे तो दिलके रोगी इस नुस्खेका एक बार प्रयोग अवश्य करें। कण्डक्टर बोला—तीन रुपये दो और पाँच रुपये लो। पीपलके पत्तेमें दिलको बल और शान्ति देनेकी बूढ़ा बोला कि खुल्ले होते तो पहले ही दे देता। कण्डक्टर बोला तो फिर ले लेना और बस आगे बढ़ा अद्भुत क्षमता है। दी। बूढ़ा बेचारा सिर्फ यह बोला—'तेरा भला नहीं इस पीपलके काढ़ेकी तीन खुराकें सुबह ८ बजे, होगा।' सेमरी एवं अमरा गाँवके बीच भी एक सवारीके फिर ११ बजे एवं २ बजे ली जा सकती हैं। साथ यही घटना हुई। मोंठ ग्रामके पहले ही मोटर खुराक लेनेसे पहले पेट एकदम खाली नहीं होना ठेलेसे टकरा गयी, जिसमें सवारियोंको चोटें आयीं, चाहिये, बल्कि सुपाच्य एवं हल्का नाश्ता करनेके बाद कण्डक्टरको भी चोटें आयीं और दो रुपयेके बदले ही लें। पाँच सौ रुपये कण्डक्टरके दवा, पट्टी आदिमें खर्च हो प्रयोगकालमें तली चीजें, चावल आदि न लें। गये। गलत कार्यका ऐसा ही नतीजा होता है। लोग मांस, मछली, अण्डे, शराब, धूम्रपानका प्रयोग बन्द कर कहते हैं कि शाप अब नहीं लगता, पर अन्तर्वेदनासे दें। नमक, चिकनाईका प्रयोग बन्द कर दें। दिया गया शाप लगता है एवं अन्तर्सुखसे दिया गया अनार, पपीता, आँवला, बथुआ, लहसुन, मेथी

पढो, समझो और करो संख्या ५] रुपये लिये जाते हैं। गाय जबतक दूध देती है, गरीब दाना, सेबका मुख्बा, मौसिमी, रातमें भिगोये काले चने, व्यक्तिके पास रहती है और जब दुध देना बन्द कर देती किसमिस, गुग्गुल, दही, छाछ आदि लें। है तो वह वापस गोशाला भेज दी जाती है। —गौरव जैन हार्ट अटैककी सर्वसुलभ औषधि होनेके नाते ही सम्भवतः भगवान्ने पीपलके पत्तोंको हार्टशेप बनाया [प्रेषक—सलीम खाँ फरीद] है।—भगवानदास मन्त्री, मोबाइल : ०८८८९७७६६९९ पाशविकता (8) मैं प्रतिदिन सुबह घरके बगीचेमें आकर बैठ जाता बेसहारा गायोंका सहारा-मकसूद था। वहीं एक बन्दर रहता था, जो नियमित रूपसे उसी हिन्दू धर्ममें जिसे माँका दर्जा मिला है, उसे दुतकारना समय प्रतिदिन आकर याचनापूर्वक दोनों हाथोंसे मानो एक मुसलिम युवकसे नहीं सहा गया। बेसहारा गायोंकी निवेदन करता हुआ बिस्कुट मॉॅंगता था। मैं भी सहर्ष पीड़ाने उस युवकको गो-सेवक ही नहीं, ८० गायोंका संरक्षक भी बना दिया। आलम यह है कि जबतक वह उसको बिस्कुट देकर प्रसन्नताका अनुभव करता था। वह शान्तिपूर्वक बिस्कुट खाकर चला जाता था। गोशाला जाकर गायोंको नहीं देख ले, तबतक उसके मनको एक दिन मैं बीमार हो गया, वह नियत समयपर चैन नहीं मिलता है। गायोंकी यह सेवा इबादतकी शक्ल आया, मैंने खिड़कीसे उसे बिस्कुट दे दिया, उसने उसे इिख्तयार कर चुकी है मकसूद खानके लिये। जिला लेकर बिना खाये सम्हालकर खिडकीके पास ही रख मुख्यालयके पास किरडोली गाँवके रहनेवाले मकसूदने दो साल पहले १५ लाख रुपये खर्चकर 'पीरबाबा रामदेव दिया। मैं तीन दिनतक बीमार रहा, वह प्रतिदिन दिनमें गोशाला' की स्थापना की। गोशालाका एक माहका खर्चा तीन-चार बार आकर खिड्कीसे मुझे देखकर वापस चला जाता था। मेरा स्वास्थ्य ठीक होनेपर मैं वापस करीब २५ हजार रुपये भी मकसूद खान उठाते हैं। गायोंके प्रति उनकी सेवाकी ललकने समूचे क्षेत्रमें साम्प्रदायिक बगीचेमें बैठने लगा, वह भी प्रसन्नचित्त होकर छुपाये सौहार्दकी एक अनुठी मिसाल कायम की है। हुए बिस्कुटोंको लाकर खाकर चला गया। मैं अपने प्रति किरडोली गाँव मुसलिमबहुल क्षेत्र है। गाँवकी आबादी उसकी संवेदना देखकर आश्चर्यचिकत रह गया कि जानवर भी कितने संवेदनशील होते हैं। करीब १२ हजार है। जिसमें सात हजारसे अधिक मुसलिम निवास करते हैं। मकसूद खान बताते हैं कि दो साल पहले एक दिन वह रक्तरंजित अवस्थामें बड़ी मुश्किलसे बेसहारा गायोंको दुतकारने और डण्डा मारकर भगानेके लंगड़ाकर चलता हुआ मेरे पास आया और बेहोश दृश्यने उनके मनको बहुत कचोटा। इसके बाद बेसहारा होकर गिर पडा। किसीने उसपर पत्थरसे प्रहार किया गायोंका सहारा बननेका उन्होंने फैसला किया। गाँवकी था, जिससे वह बुरी तरह जख्मी हो गया था। हम उसे तुरंत अस्पताल ले गये। जहाँ डॉक्टरोंने उसे मृत घोषित सार्वजनिक भूमिपर गायोंकी छायाके लिये लम्बा-चौड़ा टीन शैड बनाया। पानी और चारा उत्पादनके लिये ट्यूबवेल कर दिया। मैं दुखी मनसे उसके बहते हुए रक्तमें मानवीय क्रूरताका अट्टहास महसूस कर रहा था एवं लगाया। मकसूदके इस कार्यसे हिन्दू काफी प्रभावित हुए अश्रुपूर्ण श्रद्धांजलि देकर चुपचाप वापस घर आ गया। और कई लोग गोशालासे जुड भी गये। ये सभी नि:स्वार्थ आज भी जब वह घटना याद आ जाती है तो मैं भावसे प्रतिदिन गायोंकी सेवामें समर्पित हैं। द्रवित हो जाता हूँ और उस तथाकथित मनुष्यकी गोशालामें ब्यानेवाली गाय और उसके बछडेको पाशविकताको नहीं भूल पाता हूँ।—राजेश माहेश्वरी किसी गरीबको दे दिया जाता है। इसके लिये उससे ११००

मनन करने योग्य सेवासे शत्रुताकी समाप्ति

बहुत पहलेकी बात है, किसी नरेशके मनमें तीन माँग रहे हो?'

प्रश्न आये-१. प्रत्येक कार्यके करनेका महत्त्वपूर्ण समय उस व्यक्तिने बताया—'आपने मुझे कभी देखा नहीं

कौन-सा है ? २. महत्त्वका काम कौन-सा है ? ३. सबसे है; किंतु एक युद्धमें मेरा भाई आपके हाथों मारा गया है। मैं तभीसे आपको मारकर भाईका बदला लेनेका

महत्त्वपूर्ण व्यक्ति कौन है ?

नरेशने अपने मन्त्रियोंसे पूछा, राजसभाके विद्वानोंसे

पूछा; किंतु उन्हें किसीके उत्तरसे संतोष नहीं हुआ। वे अन्तमें नगरके बाहर वनमें कृटिया बनाकर रहनेवाले

एक संतके समीप गये। संत उस समय फावड़ा लेकर

फूलोंकी क्यारीकी मिट्टी खोद रहे थे। राजाने साधुको प्रणाम करके अपने प्रश्न उन्हें सुनाये; परंतु साधुने कोई

उत्तर नहीं दिया। वे चुपचाप अपने काममें लगे रहे। राजाने सोचा कि साधु वृद्ध हैं, थक गये हैं, वे

स्वस्थ चित्तसे बैठें तो मेरे प्रश्नोंका उत्तर दे सकेंगे। यह विचार करके उन्होंने साधुके हाथसे फावडा ले लिया और स्वयं मिट्टी खोदने लगे। जब साधु फावड़ा देकर

अलग बैठ गये, तब नरेशने उनसे अपने प्रश्नोंका उत्तर देनेकी प्रार्थना की। साधु बोले—'देखो, उधर दूरसे कोई

व्यक्ति दौड़ता आ रहा है। पहले हमलोग देखें कि वह क्या चाहता है।'

सचमुच एक मनुष्य दौड़ता आ रहा था। वह अत्यन्त भयभीत लगता था। उसके शरीरपर शस्त्रोंके

घाव थे और उनसे रक्त बह रहा था। समीप पहुँचनेसे पहले ही वह भूमिपर गिर पड़ा और मूर्छित हो गया।

साधुके साथ राजा भी दौड़कर उसके पास गये। जल लाकर उन्होंने उसके घाव धोये। अपनी पगडी फाडकर

उसके घावोंपर पट्टी बाँधी। इतनेमें उस व्यक्तिकी मूर्छा दूर हुई, राजाको अपनी सेवा-शुश्रुषामें लगे देखकर

उसने उनके पैर पकड़ लिये और रोकर बोला—'मेरा

नरेशने आश्चर्यपूर्वक कहा—'भाई! मैं तो तुम्हें

अपराध क्षमा करें।'

लौटोगे।'

समझे हो तो फिर समझ लो कि सबसे महत्त्वपूर्ण समय 'वर्तमान समय' है, उसका उत्तमसे उत्तम उपयोग करो।

महत्त्वपूर्ण व्यक्ति मैं हूँ, जिसके द्वारा शान्ति पाकर तुम

अवसर ढुँढ रहा था। आज आपको वनकी ओर आते

देखकर मैं छिपकर आपको मार डालने आया था, परंतु

आपके सैनिकोंने मुझे देख लिया। वे मुझपर एक साथ

टूट पड़े। उनसे किसी प्रकार प्राण बचाकर मैं यहाँ

आया। महाराज! आज मुझे पता लगा कि आप कितने

दयालु हैं। आपने अपनी पगड़ी फाड़कर मुझ-जैसे

शत्रुके घाव बाँधे और मेरी सेवा की। आप मेरे अपराध

क्षमा करें। अब मैं आजीवन आपका सेवक बना रहूँगा।'

साधुसे पुन: अपने प्रश्नोंका उत्तर पूछा तो साधु बोले—

'राजन्! आपको उत्तर तो मिल गया। सबसे महत्त्वपूर्ण

समय वह था, जब आप मेरी फुलोंकी क्यारी खोद रहे

थे; क्योंकि यदि आप उस समय क्यारी न खोदकर लौट

जाते तो यह व्यक्ति आपपर आक्रमण कर देता। सबसे

महत्त्वपूर्ण काम था इस व्यक्तिकी सेवा करना; क्योंकि

यदि सेवा करके आप इसका जीवन न बचा लेते तो यह

शत्रुता चित्तमें लेकर मरता और पता नहीं इसकी तथा

आपकी शत्रुता कितने जन्मोंतक चलती रहती और सबसे

उस व्यक्तिको नगरमें भेजनेका प्रबन्ध करके राजाने

नरेशने मस्तक झुकाया। साधु बोले—'ठीक न

सबसे महत्त्वपूर्ण वह काम है, जो वर्तमानमें तुम्हारे सामने है। उसे पूरी सावधानीसे सम्पन्न करो। सबसे

महत्त्वपूर्ण व्यक्ति वह है, जो वर्तमानमें तुम्हारे सम्मुख पहामान्तराहिक क्रिडेटिन इस्पिक्समान्तरके विद्योव के प्राप्त करें के अपने क्रिडेटिन के प्राप्त करें के क्रिडेटिन के क्रिटेटिन के क्रिटेटिन के क्रिटि

'कल्याण' का आगामी ९०वें वर्ष (सन् २०१६ ई०)-का विशेषाङ्क

'गंगा-अङ्क'

मुद मंगल मूला। सब सुख करनि हरनि सब सूला॥

(श्रीरामचरितमानस) गंगाधर भगवान् शम्भुने वेदोंका सार भाग लेकर कृपा करके लोककल्याण तथा जगत्की रक्षाके लिये सरिद्वरा

गंगाजीका प्राकट्य किया है। उन्होंने श्रुतिके अक्षरोंको निचोड़कर उसी रससे भगवती गंगाकी उद्भावना की है।

शिवात्मिका जलरूपा जगद्धात्री गंगा भगवान् शिवकी परामूर्ति हैं। वे समस्त ब्रह्माण्डोंकी अधिष्ठात्री, विद्यारूपिणी,

आरोग्यदायिनी, करुणामयी, आनन्दमयी, मंगलमयी, कर्म, भक्ति एवं ज्ञानकी त्रिवेणीरूपा, विशुद्ध धर्मरूपिणी तथा

भुक्ति-मुक्तिदायिनी हैं। जैसे पुष्पकी सुरिभ चतुर्दिक् परिवेशको सुवासित कर देती है, वैसे ही गंगा सर्वत्र पावनताका

संचार करती हैं। गंगा हमारे कर्मोंकी साक्षी हैं। एक जीवन्त दैवीशक्तिके रूपमें, ममतामयी माके रूपमें, परम तीर्थके

रूपमें वे सर्वत्र व्याप्त हैं।

भगवती गंगाकी कीर्तिकथाका अनन्त विस्तार है। गंगाकी गाथा भारतीय सनातन संस्कृति एवं सभ्यताकी

गौरवगाथा है। आधिभौतिक स्तरपर ये सदानीरा हैं, सतत प्रवाहमयी चैतन्यधारा हैं, आधिदैविक स्तरपर पवित्रता

और पुण्यकी अधिष्ठात्री देवी हैं और आध्यात्मिक स्तरपर ऊर्ध्वगामिनी चेतना, ज्ञान एवं मोक्ष प्रदान करनेवाली

हैं। पुण्यतोया गंगाका माहात्म्य अनिर्वचनीय है। त्रैलोक्यमें जितने तीर्थ हैं, वे सब गंगामें स्थित हैं। गंगा समस्त

पार्थिव वस्तुओं, लोकों, तीर्थों तथा सभी सात्त्विक अनुभूतियोंमें व्याप्त हैं, ऐसी व्यापकता केवल ईश्वरमें है, इसीलिये

गंगाका ईश्वरत्व है। वे देवमाता हैं, वेदमाता हैं, लोकमाता हैं। सभी तीर्थजलोंमें गंगाका पावन अधिष्ठान है।

गंगाके स्मरणमात्रसे समस्त कर्म-बन्धन छिन्न-भिन्न हो जाते हैं, अन्त:करण पवित्र, निर्मल, सात्त्विक तथा प्रकाश-

पुंजसे उद्दीप्त हो उठता है तथा मिलन वासनाओंके तन्तु सहज ही क्षीण हो जाते हैं। गंगाका स्मरण, दर्शन, स्पर्श,

मार्जन, स्नान (अवगाहन) तथा पान अमोघ फलदायी है। गंगास्नानसे सद्य: स्फूर्ति, चैतन्यता तथा आरोग्यादि

लाभ प्रत्यक्ष ही दिखायी देते हैं। गंगाजल बाह्य मल एवं आन्तरिक मल—दोनोंका नाशक, बुद्धिवर्धक तथा

जठराग्निको उद्दीप्त करनेमें सहज शक्तिदायी है। भगवती गंगाका अवतरण पापनाश तथा परोपकारके लिये हुआ

है। गंगाकी सन्निधिमें जो भी जप, तप, पूजा, अनुष्ठान आदि कर्म किये जाते हैं, वे अक्षय हो जाते हैं।

ब्रह्मद्रवस्वरूपा गंगा हमारी अस्मिताकी पहचान हैं, न केवल हिन्दू, अपितु सभी धर्मावलम्बी गंगाका आदर

करते हैं। गंगा स्वयं श्रद्धारूपा हैं। गंगाकी सच्ची सेवा, सच्ची पूजा, उनके प्रति श्रद्धा एवं आस्थाको आत्मसात्

करना है। गंगा चिन्मय आलोकको प्रदान करती हैं और भवसागरसे सहज ही तार देती हैं।

विडम्बना है कि ऐसी लोकोत्तर महिमा तथा सर्वविध उपयोगिता होते हुए भी वर्तमानमें गंगा एवं यमुनाका

स्वरूप मिलनतर होता जा रहा है। इसमें हेत् चाहे जो भी हो—मलप्रक्षेप हो अथवा जलके स्वाभाविक प्रवाहमें

अवरोध हो जाना हो अथवा आर्थिक विकास हो—यह बड़ी ही दु:खद, चिन्ताजनक एवं सोचनीय स्थिति है।

ऐसा न हो, इसके लिये सभीको विशेष रूपसे सचेष्ट रहनेकी आवश्यकता है। तभी हम अपनी थातीको भविष्यके

लिये सँजोकर रख सकेंगे और गंगाके औषधीय गुणों एवं आध्यात्मिक लाभोंको प्राप्त कर सकेंगे। हमारा यह

पावन कर्तव्य है कि हम तीर्थजलोंको दुषित न करें। जीवनदायिनी गंगाके प्रति होती जा रही अनास्था, वर्तमानके आर्थिक विकासवाद, विज्ञानवाद तथा भौतिक प्रगतिवादने गंगाके यथार्थ स्वरूपको ही मिलन एवं अस्तित्वविहीन

बना दिया है, ऐसेमें गंगानिर्मलीकरणकी प्रक्रियाएँ एवं चेष्टाएँ तो स्वयं पंक लगाकर उसे धोनेके समान प्रतीत

होती हैं। न केवल गंगा, अपितु यमुना, नर्मदा आदि पुण्यतोया नदियाँ, तीर्थ, वन, पर्वत—यहाँतक कि समूचा
पर्यावरण, समस्त प्रकृति ही प्रदूषणसे व्याप्त होती जा रही है। पृथ्वी, जल, तेज, वायु, आकाश—ये पाँचों तत्त्व
अतिमानवीय चेष्टाओंके कारण विकृत होते जा रहे हैं। धर्म एवं अध्यात्मके इन स्रोतों की उपेक्षा एवं इनके
अत्यधिक दोहनके परिणामस्वरूप आज समूचे विश्वकी, मानवीयताकी एवं प्राणिजगत्की जो स्थिति हो रही है,
वह किसीसे छिपी नहीं है। इसी कारण मानव आज अपनेको सब प्रकारसे साधनसम्पन्न समझते हुए भी सर्वथा
असहाय एवं अशक्त-सा हो गया है, आध्यात्मिक बल क्षीण हो जानेसे उसका आत्मबल भी लुप्त होता-सा दीखता
है।
इन्हीं सब बातोंको दृष्टिगत रखते हुए इस वर्ष सन् २०१६ ई० के विशेषाङ्कके रूपमें 'गंगा–अङ्क' प्रकाशित

कल्याण

86

```
करनेका निर्णय लिया गया है, इसमें मुख्यरूपसे वर्तमानमें हो रही पर्यावरणकी दुर्दशा, उपभोक्तावादके दुष्परिणाम,
तीर्थोंकी विकृति, निदयोंका प्रदूषण, देवनदी गंगाका तीर्थत्व, उसका धार्मिक तथा आध्यात्मिक महत्त्व,
```

आरोग्यप्राप्तिमें गंगाकी उपयोगिता, गंगावतरणके रोचक आख्यान, गंगोपासनाका स्वरूप, गंगाका इतिहास, गंगाका भुगोल, गंगा एवं अर्थशास्त्र, गंगाजल का वैशिष्ट्य, गोमुखसे गंगासागरतक गंगायात्रा, गंगाजल और विज्ञान, गंगाके

यशोगायक, गंगाके तटवर्ती तीर्थौं तथा नगरोंका इतिहास, गंगाका यमुना एवं अन्य सरिताओंके साथ संगम एवं उसका माहात्म्य, काशीकी उत्तरवाहिनी गंगा तथा गंगाजीका साहित्य, वर्तमानमें गंगाकी दशा और उसके निवारणके

उपायोंकी समीक्षा एवं इस सम्बन्धमें महत्त्वपूर्ण सुझाव भी प्रस्तुत करनेका विचार है। हमारा यह मानना है कि गंगा आदि तीर्थोंके प्रति हमारी प्राचीन आस्था जग जाय एवं उनके प्रति सच्ची

श्रद्धा-भक्ति उत्पन्न हो जाय तो स्वतः गंगा निर्मल हो जायगी। इसी दृष्टिसे हम आदरणीय संत-महात्माओं, आचार्यों, गण्यमान्य विद्वान् मनीषी लेखकों तथा विशिष्ट पर्यावरणविदोंसे इस सम्बन्धमें सहयोगकी प्रार्थना करते

हैं। विशेषाङ्ककी एक संक्षिप्त सूची दिशा-निर्देशके रूपमें दी जा रही है। हमारी प्रार्थना है कि सूचीमें उल्लिखित

विषयों अथवा सूचीसे अतिरिक्त सम्बद्ध विषयोंपर अपनी महत्त्वपूर्ण सामग्री १५ अगस्त २०१५ ई० तक भेजनेकी कृपा करें। विषयसे सम्बद्ध यदि कोई रंगीन चित्र, सादे चित्र आदि उपलब्ध हों तो उनका भी यथासाध्य उपयोग किया जा सकता है।

विनीत— राधेश्याम खेमका

(सम्पादक)

भाग ८९

[क] गंगा-तत्त्वदर्शन ५- तीर्थोंका त्रैविध्य-

(क) जंगम तीर्थ—साधु-संत, महात्मा, ब्राह्मण। १- 'गंगा' पदकी निरुक्ति और अर्थविस्तार।

२- गंगाका त्रिविधरूप-(ख) मानस तीर्थ—सत्य, दया, क्षमा, इन्द्रियनिग्रह,

(क) आधिभौतिक स्वरूप—जलरूप। सरलता. संयम आदि।

(ख) आधिदैविक स्वरूप—देवीरूप (गंगाविग्रह)। (ग) भौम (स्थावर) तीर्थ-भूमिके प्रभाव एवं

जलके तेजसे प्रादुर्भृत तीर्थ। (ग) आध्यात्मिक स्वरूप-चिन्मय मुक्तिरूप।

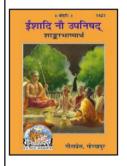
६- तीर्थयात्राकी शास्त्रीय विधि और तीर्थोंके विधि-३- गंगा—साक्षात् ब्रह्मद्रव

४- गंगाका तीर्थत्व एवं माहात्म्य। निषेध।

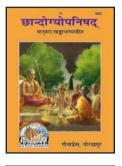
संख्या ५] 'कल्याण' का आगामी ९०वें वर्ष	(सन् २०१६ ई०)-का विशेषाङ्क ४९
************************************	**************************************
७- 'नमामि गङ्गे तव पादपङ्कजम्।'	८- शास्त्रोंमें परिगणित गंगामें निषिद्ध कर्म।
८- अनादि सृष्टिमें जलका सर्वप्रथम प्रादुर्भाव— 'अप	९- गंगा-मृत्तिकाका वैशिष्ट्य।
एव ससर्जादौ।'	१०- गंगाके तटकी वायुकी महिमा।
९- गंगाधर भगवान् शिव और गंगा।	११- गंगाके तट, क्षेत्र तथा गर्भकी परिभाषा।
१०- गंगा और उमा।	१२- 'गंगायां घोषः' का लाक्षणिक अर्थ।
११- हैमवती गंगा।	१३- गंगाकी सन्निधिमें शवदाह तथा गंगामें अस्थिप्रक्षेपकी
१२- विष्णुचरणनख और विष्णुपदी गंगा।	महिमा।
१३- ब्रह्मद्रवमयी गंगा।	१४- गंगासे सम्बद्ध व्रतोपवास एवं अनुष्ठान।
१४- शिवजटाजूट और गंगा।	१५- गंगासप्तमी, गंगादशहराव्रत और गंगापरिक्रमा-व्रत।
१५- राधाकृष्णमयी गंगा।	१६– गंगामें दीपदानकी महिमा।
१६- राजर्षि भगीरथ और गंगा।	१७– गंगापूजन (गंगापुजैया)।
१७- जाह्नवी और गंगा।	१८– दूसरेके निमित्त गंगामें स्नान।
१८- गंगावतरणकी विभिन्न कथाएँ।	१९- प्रायश्चित्त-विधानोंमें गंगाजलकी महिमा।
१९- वामनावतार और गंगा।	२०– गंगाजीके प्राचीन मन्दिर।
२०- त्रिपथगामिनी गंगा।	२१- गंगासम्बन्धी संस्मरण, यात्रावृत्तान्त तथा सत्य
२१- 'स्रोतसामस्मि जाह्नवी।'	घटनाएँ ।
२२- गंगा—वेदमाता, देवमाता एवं लोकमाता।	[ग] गंगाका भूगोल और काशी-माहात्म्य
२३- गंगाका इतिहास।	१- गंगोत्री, यमुनोत्री और गोमुख।
२४- गंगा और अर्थशास्त्र।	२- गंगायात्रा—गोमुखसे गंगासागरतक।
२५- गंगाके माहात्म्यकी पौराणिक गाथाएँ।	३- हिमालय और गंगा।
२६- गंगाका साक्षीभाव।	४– गंगाकी भौगोलिक यात्रा।
२७- गंगापर साहित्य।	५- गंगाके तटवर्ती प्रमुख तीर्थीं एवं देवालयोंका
२८- गंगाके यशोगायक [देवगण, मन्त्रद्रष्टा ऋषि-	माहात्म्य एवं परिचय।
महर्षि, वेदव्यास, महर्षि वाल्मीकि, शंकराचार्य,	६- गंगाके तटवर्ती प्रमुख नगरों एवं ग्रामोंका इतिहास।
कालिदास, सूर, तुलसी, पं० जगन्नाथ, कविवर	७- सप्तसरितादर्शन—गंगा, यमुना, गोदावरी, सरस्वती,
गुमानी, रहीम, भारतेन्दु हरिचन्द्र, रत्नाकर आदि]।	नर्मदा, सिन्धु और कावेरी।
[ख] गंगोपासना एवं गंगासेवा	८- आदिगंगा गोमती और गौतमी गंगाका माहात्म्य।
१- गंगोपासनाका यथार्थ स्वरूप।	९– भागीरथी गंगा और उसकी सहायक नदियाँ।
२- गंगाजीके विविध मन्त्र और ध्यानस्वरूप।	१०- प्रयाग, पंचप्रयाग और सप्तप्रयाग।
३- गंगासेवाके विविध आयाम।	११- गंगाके तटपर लगनेवाले मेले।
४- गंगासम्बन्धी विविध स्तोत्र, शतनाम तथा सहस्रनाम।	१२– काशीमाहात्म्य और काशीका इतिहास
५- गंगाकी सन्निधिमें किये गये कर्म अमोघ फलदायी।	१३– काशी और उत्तरवाहिनी गंगा।
६- गंगानामस्मरण, दर्शन, स्पर्श, आचमन, मार्जन, स्नान	१४- भगवान् विश्वनाथ और भगवती गंगा।
(अवगाहन), अनुसरण, अनुमोदन आदिकी महिमा।	१५- काशीमें पंचगंगा तथा असी और वरुणा-संगम।
७- गंगास्नानको शास्त्रीय विधि।	१६– काशीमें गंगाके घाट।

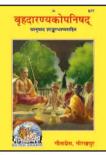
१७- काशीका दीपदान-महोत्सव (देवदीपावली) तथा १५- फारसी साहित्यमें गंगा-निरूपण। गंगा-आरती। १६- कविवर रहीमका गंगाप्रेम। १७- ज्योतिषशास्त्रमें निर्दिष्ट तीर्थयात्रा एवं तीर्थस्नानपरक १८- चना चबैना गंगजल जो पुरवै करतार। काशी कबहुँ न छोड़िये विश्वनाथ दरबार॥ विविध योग। १९- 'काश्यां मरणान्मुक्तिः।' १८- अंग्रेजोंकी दृष्टिमें गंगा। [घ] गंगा और आरोग्य १९- स्थापत्यकला और मूर्तिकलामें गंगाका चित्रण। १- 'औषधं जाह्नवीतोयम्।' २०- मुद्राओं (सिक्कों)-में गंगाके विविध स्वरूपोंका २- गंगास्नान और त्रिविध (दैहिक, मानस और अंकन। आध्यात्मिक)-आरोग्यकी प्राप्ति। [च] गंगा और पर्यावरण ३- रोगोपचारमें गंगास्नान, गंगाजल एवं गंगातटपर १- प्रकृतिके पंचिवध सोपान—पृथ्वी, जल, तेज, वायु निवासकी महिमा। तथा आकाश। ४- गंगावायुसेवनकी उपयोगिता और मानस-उपचार। २- पंचदेवोंके अधिदेव और पर्यावरण। ५- आयुर्वेदकी दृष्टिसे गंगाजलका विश्लेषण और ३- पर्यावरण और प्राणिजगत्का अन्त:सम्बन्ध। उसमें निहित तत्त्व। ४- पर्यावरण-शृद्धि और मानवजीवन। ५- पर्यावरण-संरक्षणमें पुण्यतोया नदियोंका अवदान। ६- स्नान-विज्ञान और गंगाजल। ७- औषधनिर्माणमें गंगाजलकी उपयोगिता। ६- विज्ञान एवं प्रकृतिरक्षण। ८- गंगा-बालुकाका वैशिष्ट्य। ७- पर्यावरणरक्षिका हिमसुता गंगा। ९- विज्ञानकी दृष्टिमें गंगाजल और गंगास्नान। ८- गंगा और मानवका आर्थिक विकास। [ङ] सत्साहित्यमें गंगा-दर्शन ९- औद्योगिक प्रदुषण और जल एवं वायुतत्त्वकी स्थिति। १- वैदिक संहिताओंमें गंगा-माहात्म्य। १०- गंगाप्रदूषणके कारण और निवारणके उपाय। २- ब्राह्मणग्रन्थों तथा उपनिषदोंमें गंगातत्त्वनिरूपण। ११- मुदासंरक्षणके कतिपय उपाय। ३- स्मृतियों तथा निबन्धग्रन्थोंमें गंगासाहित्य। १२- गंगानिर्मलीकरणके सम्बन्धमें वर्तमानमें हो रहे ४- पुराणोंमें उपलब्ध गंगाका विशाल वाङ्मय। प्रयत्नोंकी समीक्षा। ५- आदिकाव्य वाल्मीकीय रामायणका गंगोपाख्यान। १३- गंगाप्रदुषणका इतिहास। ६- महाभारतमें उपलब्ध गंगावतरणकी कथा। १४- गंगाप्रवाह एवं गंगाजलको वर्तमान स्थिति। १५- भौतिक विकास और आध्यात्मिक विकास ७- महाकवि कालिदासप्रतिपादित गंगामहिमा। ८- पण्डितराज जगन्नाथकी गंगाभक्ति। (उन्नति)-का सामञ्जस्य। ९- गोस्वामी तुलसीदासनिरूपित गंगाकी यशोगाथा। [छ] गंगा और अध्यात्मविज्ञान १०- हिन्दी साहित्य और गंगा-दर्शन। १- गंगा, गीता, गायत्री, गाय और गोविन्द—'गकाराः ११- लोकभाषा और लोकसाहित्यमें गंगा-निरूपण, पञ्च दुर्लभाः।' लोकगीतोंमें गंगागाथा-गंगाका लोकसाहित्य। २- ज्ञानगंगामें अवगाहन। १२- योग-साधनामें गंगा-यमुना-सरस्वती (त्रिवेणी)-३- भौतिक त्रिवेणी और आध्यात्मिक त्रिवेणी। का निर्वचन। ४- गंगा-मृक्तिका साधन भी और साध्य भी। १३- तान्त्रिक वाङ्मयमें गंगाका स्वरूप। ५- 'रसो वै सः' परमात्मा रसस्वस्वरूप (जलरूप) हैं। คัทักสับเราส์รูที่เราเวาสารายาที่เหาะ https://dsc.gg/dharma-i ที่Are winter biscord Server https://dsc.gg/dharma-i new https://dsc.gg

गीताप्रेस, गोरखपुरसे प्रकाशित ग्यारह उपनिषद्



कोड 1421 मृ०₹१८०





ऐतरेय. तैत्तिरीय तथा श्वेताश्वतर उपनिषदको इस पुस्तकमें पाठकोंके सुविधार्थ एक साथ प्रकाशित किया गया है। सजिल्द, मल्य ₹१८०. डाक एवं पैकिंगखर्च ₹ ३५ अतिरिक्त।

ईशादि नौ उपनिषद् (कोड 1421)—

गीताप्रेससे शाङ्करभाष्य और भाष्यार्थके साथ अलग-अलग पुस्तकरूपमें पूर्व प्रकाशित ईश. केन. कठ. प्रश्न. मण्डक. माण्डक्य.

कोड 582 मु०₹१२०

कोड 577 मु०₹१८०

छान्दोग्योपनिषद् (कोड 582)—सामवेदीय तलवकार ब्राह्मणके अन्तर्गत वर्णित इस उपनिषदमें क्रमबद्ध और युक्तिपूर्ण ढंगसे कर्म तथा ज्ञानका सजीव वर्णन है। तत्त्वज्ञान और उपासनाकी इसमें विस्तृत चर्चा है। शाङ्गरभाष्य, सानवाद, मल्य ₹१२० डाक एवं पैकिंगखर्च ₹३० अतिरिक्त।

बृहदारण्यकोपनिषद् (कोड 577)—यजुर्वेदके काण्वी शाखामें वर्णित यह उपनिषद् कलेवरकी दृष्टिसे बृहत् तथा वनमें अध्ययन किये जानेके कारण आरण्यक कहलाता है। शाङ्करभाष्य, सानुवाद, मृल्य ₹१८० डाक एवं पैकिंगखर्च ₹३५ अतिरिक्त।

नोट— ग्यारह उपनिषदोंका पूरा सेट मँगवानेके लिये पुस्तक मूल्य, डाक एवं पैकिंगखर्चसहित ₹ ५४५ भिजवायें। अलग-अलग उपनिषद् भी मँगवा सकते हैं।

उपनिषद्-अङ्क (कल्याण-वर्ष २३, सन् १९४९ ई०) सचित्र, सजिल्द, कोड 659, ग्रन्थाकार— इसमें नौ प्रमुख उपनिषदों-(ईश, केन, कठ, प्रश्न, मुण्डक, माण्डुक्य, ऐतरेय, तैत्तिरीय एवं श्वेताश्वतर-) का मल, पदच्छेद, अन्वय तथा व्याख्यासहित संकलन है। इसके अतिरिक्त इसमें ४५ उपनिषदोंका हिन्दी-भाषान्तर तथा महत्त्वपूर्ण स्थलोंपर टिप्पणी भी दी गयी है। मुल्य ₹२००, डाकखर्च ₹५०

महाभारत (सटीक) कोड 728, ग्रन्थाकार—छ: खण्डोंमें सेट—महाभारत भारतीय संस्कृतिका अद्भत महाग्रन्थ है। इसे पंचम वेद भी कहा जाता है। इस महाग्रन्थमें उपनिषदोंका सार, इतिहास, पुराणोंका उन्मेष, निमेष, चातुर्वर्णका विधान, पुराणोंका आशय, ग्रह, नक्षत्र, तारा आदिका परिमाण, तीर्थों, पुण्य देशों, नदियों, पर्वतों, समुद्रों तथा वनोंका वर्णन होनेके कारण यह अनन्त गूढ़, गुह्य रत्नोंका भण्डार है। मूल्य ₹१९५०, डाकखर्च ₹२२५

	— महाभारतक विभिन्न खण्डाका विवरण — —			
कोड	खुण्ड	विवरण	मू०₹	डाकखर्च
32	प्रथम खण्ड	(सानुवाद) ग्रन्थाकार, आदिपर्वसे सभापर्वतक, सचित्र, सजिल्द।	३२५	૪५
33	द्वितीय खण्ड	(सानुवाद) ग्रन्थाकार, वनपर्वसे विराटपर्वतक, सचित्र, सजिल्द।	३२५	४५
34	तृतीय खण्ड	(सानुवाद) ग्रन्थाकार, उद्योगपर्वसे भीष्मपर्वतक, सचित्र, सजिल्द।	३२५	४५
35	चतुर्थ खण्ड	(सानुवाद) ग्रन्थाकार, द्रोणपर्वसे स्त्रीपर्वतक, सचित्र, सजिल्द।	३२५	५०
36	पञ्चम खण्ड	(सानुवाद) ग्रन्थाकार, शान्तिपर्व, सचित्र, सजिल्द।	३२५	४५
37	षष्ठ खण्ड	(सानुवाद) ग्रन्थाकार, अनुशासनपर्वसे स्वर्गारोहणपर्वतक, सचित्र, सजिल्द।	३२५	४५
		3		

संक्षिप्त महाभारत (दो खण्डोंमें) कोड 39, 511, ग्रन्थाकार—मूल्य ₹४४०, डाकखर्च ₹६० (गुजराती, बँगला, तेलुगु भी)



रजि० समाचारपत्र—रजि०नं० २३०८/५७ पंजीकृत संख्या—NP/GR-13/2014-2016

LICENSED TO POST WITHOUT PRE-PAYMENT | LICENCE No. WPP/GR-03/2014–2016

अब ग्रन्थाकार रंगीनमें



आदर्श ऋषि-मुनि

(कोड 1986)—इस पुस्तकमें गोस्वामी तुलसीदास, श्रीसूरदास, मीराँबाई, सनकादि, देवर्षि नारद, ब्रह्मर्षि वसिष्ठ, महर्षि विश्वामित्र आदि १६ ऋषि-मुनियोंके चरित्रका

प्रकाशन किया गया है। प्रत्येक चरित्रके साथ उनके रंगीन चित्र भी दिये गये हैं। मूल्य ₹२५

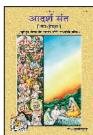


आदर्श सम्राट्-

(कोड 2022)—इस पुस्तकमें सम्राट् अशोक, सम्राट् समुद्रगुप्त, बादशाह अकबर, महाराणा प्रताप, शिवाजी,

महारानी लक्ष्मीबाई आदि ३२ आदर्श राजाओंके सुन्दर एवं संक्षिप्त जीवन-

परिचयके साथ कविताओंमें उनके जीवनसे शिक्षाका प्रकाशन किया गया है। मूल्य ₹२५



आदर्श सन्त-

(कोड 2026)—इस पुस्तकमें संत ज्ञानेश्वर, श्रीनामदेव, संत एकनाथ, समर्थ स्वामी रामदास, श्रीरामकृष्ण परमहंस. स्वामी विवेकानन्द आदि

३२ महान् संतोंके संक्षिप्त परिचयको रंगीन चित्रोंके साथ सुन्दर आर्टपेपरपर प्रकाशित किया गया है। मुल्य ₹२५



आदर्श सुधारक

(कोड 2028)—इस पुस्तकमें महात्मा जरथुस्त्र, हजरत मूसा, महात्मा सकरात, दार्शनिक प्लेटो, महात्मा टालस्टाय. राजाराममोहन राय. ईश्वरचन्द्र विद्यासागर आदि ३२ समाज

सुधारकोंके जीवन-परिचयको सुन्दर आर्टपेपरपर प्रस्तुत किया गया है। मूल्य ₹२५

गीताप्रेससे प्रकाशित बाल-साहित्य

	• • • • • • • • • • • • • • • • • • • •	
क्रोड	पुस्तक-नाम	मू० ः

- बालकोपयोगी पुस्तकें रंगीन चित्रोंके साथ बालकके गुण 1690 ग्रन्थाकार आओ बच्चों तुम्हें बतायें 1689

३५

२५

२५

२५

२५

१५

20

१५

१५

१५

१५

२०

१७

२०

१७

१७

१७

१५

१५

१०

बालककी दिनचर्या 1692 बालकोंकी सीख 1693

बालकके आचरण 1694 बालकोंकी बातें 1691 पुस्तकाकार

1437 वीर बालक गुरु और माता-पिताके भक्त बालक 1451 सच्चे और ईमानदार बालक 1450

दयालु और परोपकारी बालक-बालिकाएँ '' 1449 वीर बालिकाएँ 1448

सत्य घटनाओंपर आधारित कहानियाँ आदर्श उपकार 159

कलेजेके अक्षर 160 हृदयकी आदर्श विशालता 161

162 २० 163 आदर्श मानव हृदय १७ भगवानुके सामने सच्चा सो सच्चा 164 २०

मानवताका पुजारी 165 परोपकार और सच्चाईका फल 166

असीम नीचता और असीम साधुता 510 – रोचक कहानियाँ -

पौराणिक कहानियाँ 1669 १५ पौराणिक कथाएँ 1624 १५ सत्य एवं प्रेरक घटनाएँ 1673 २५

आदर्श कहानियाँ 1093 उपयोगी कहानियाँ 137

चोखी कहानियाँ 147 १० एक लोटा पानी 122 20

प्रेरक कहानियाँ 1308 १० उपदेशप्रद कहानियाँ 680 १५

तीस रोचक कथाएँ 1688 १५ प्रेरणाप्रद कथाएँ 1782 २०

शिक्षाप्रद ग्यारह कहानियाँ 283